सत्संग
आगरा में

१९७८

राधास्वामी सत्संग ब्यास

सत्संग

आगरा में

हुज़ूर महाराज चरनसिंह जी
के
१९७८ के दौरे का वृत्तान्त
और
आपके द्वारा फ़रमाये गये
तीन सत्संग

राधास्वामी सत्संग ब्यास

सत्संग : आगरा में

प्रकाशक :
एस० एल० सोंधी,
सैक्रेटरी,
राधास्वामी सत्संग, ब्यास
ज़िला अमृतसर, (पंजाब)

प्रथम संस्करण	—	10,000	1981
द्वितीय संस्करण	—	5,000	1982
तृतीय संस्करण	—	10,000	1983
चतुर्थ संस्करण	—	10,000	1987

मुद्रक :
सरताज प्रिंटिंग प्रैस,
जालन्धर शहर ।

प्रकाशक की ओर से

आगरा का प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर सन्तमत की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह स्थान आधुनिक युग में सन्तमत—जिसको राधास्वामी मत भी कहा जाता है—का स्रोत है, जिसका प्रकाश आज संसार के अनेक भागों में फैल रहा है। परम सन्त सेठ शिवदयालसिंह जी (१८१८-१८७८), जो स्वामीजी महाराज के नाम से प्रसिद्ध हैं, का जन्म-स्थान भी आगरा है। आपने वर्षों तक सुरत-शब्द योग का अभ्यास तथा बाद में इस मार्ग का प्रचार भी यहीं किया। राधास्वामी सत्संग, ब्यास के संस्थापक महाराज बाबा जैमलसिंह जी को हुज़ूर स्वामीजी महाराज से ही परमार्थ की रोशनी मिली तथा आपने साधना और प्राप्ति के प्रारम्भिक वर्ष यहीं पर स्वामीजी महाराज की संगति में व्यतीत किये।

आज से एक सौ बीस वर्ष पूर्व हुज़ूर स्वामीजी महाराज ने पन्नी गली आगरा में सन्तमत का खुला प्रचार शुरू किया तथा लगभग अठारह वर्ष तक मन-माया के जाल में फँसी आत्माओं के उद्धार के महान् कार्य में व्यस्त रहे।

पिछले कई वर्षों से राधास्वामी सत्संग, ब्यास के आगरा-निवासी सत्संगी हुज़ूर महाराज चरनसिंह जी से आगरा पधार कर सत्संग प्रदान करने की विनती कर रहे थे। सन् १९७८ में हुज़ूर ने नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में तीन दिन के कार्यक्रम की स्वीकृति दे दी। आपने २४, २५ और २६ नवम्बर को तीन प्रेरक सत्संग प्रदान किये। अपने आगरा निवास के दौरान हुज़ूर महाराज जी राधास्वामी सत्संग के स्वामीबाग तथा दयालबाग केन्द्रों में भी तशरीफ़ ले गये। दोनों स्थानों के अधिकारियों तथा बुज़ुर्ग सत्संगियों से हुज़ूर बड़े प्रेम के साथ मिले तथा आपका स्नेहपूर्ण स्वागत किया गया।

हुज़ूर महाराज जी के आगरा के कार्यक्रम का पूरा प्रबन्ध देहली सत्संग के सैक्रेटरी, श्री रामनाथ मेहता को सौंपा गया था। राधास्वामी सत्संग ब्यास की १९७८ की वार्षिक रिपोर्ट में इस सम्पूर्ण प्रबन्ध के विषय में इस प्रकार प्रकाश डाला गया है :

"आगरा सत्संग के समय हर प्रकार के प्रबन्ध का दायित्व देहली केन्द्र के सैक्रेटरी श्री मेहता के सुपुर्द किया गया। देहली तथा कुछ अन्य केन्द्रों की संगत ने हुज़ूर महाराज जी के आगरा पहुँचने से कई दिन पूर्व तैयारियों के लिये काम शुरू कर दिया, ताकि विभिन्न स्थानों से आनेवाले सत्संगियों के निवास, भोजन आदि की उचित व्यवस्था की जा सके। सौभाग्य से ठहरने और खाने-पीने के प्रबन्ध करने के लिये एक वीरान जेल को काम में लाने की आज्ञा मिल गई। इस जेल का क्षेत्रफल ८० एकड़ से अधिक है। परन्तु यह जेल पिछले सात-आठ वर्षों से उजाड़ और बेआबाद पड़ी थी। अन्दर और बाहर गन्दगी का ढेर था, जंगली कँटीली झाड़ियों की भरमार थी और सांप, बिच्छू आदि भी मौजूद थे। इतने बड़े क्षेत्र को तीन-चार सप्ताह में साफ़ करना एक दुष्कर कार्य था। परन्तु सत्संगी बंधु अनुपम लगन, उत्साह और भक्ति-भाव के साथ इस कार्य में जुट गये। सतगुरु की कृपा का बल और प्रेम की प्रेरणा के द्वारा उन्होंने शीघ्र ही उस वीरान जेल को एक सुन्दर तथा स्वच्छ स्थान बना दिया।

'लगभग बीस हज़ार व्यक्तियों के लिये निवास, स्नान, शौच आदि का समुचित प्रबन्ध किया गया। भोजन-भण्डार, कैन्टीन आदि का भी बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया। सत्संग के लिये पालीवाल पार्क में एक विशाल पण्डाल लगाया गया जिसमें लगभग एक लाख व्यक्ति बैठ सकते थे। बिजली, पानी, तथा संगत की सुविधा और आराम के लिये किये गये अन्य सभी प्रबन्ध बहुत उत्तम थे। हुज़ूर महाराजजी ने दया-मेहर करके एक सुबह इस सम्पूर्ण क्षेत्र का चक्कर लगाया तथा सारे प्रबन्ध और सुविधाओं पर प्रसन्नता प्रकट की। हुज़ूर ने आगरा में तीन सत्संग फ़रमाये, जिन्होंने आगरा-निवासियों को ऐसा रूहानी भोजन

दिया जिसका उनको पहले कभी कम ही अनुभव हुआ होगा । सत्संग का पूरा कार्यक्रम बहुत सफल सिद्ध हुआ । इस सफलता का श्रेय श्री रामनाथ मेहता की प्रबन्ध-योग्यता और उनको सहयोग देने वाले सैंकड़ों सत्संगियों और सेवादारों को है जिन्होंने बहुत लगन और प्रेम सहित दिन-रात एक करके संगत की सेवा की और सतगुरु की प्रसन्नता प्राप्त की ।"

हुज़ूर के इस सत्संग कार्यक्रम के बाद संगत की ओर से माँग की जा रही थी कि आगरा के सत्संग पुस्तक के रूप में प्रकाशित किये जायें । अतएव हुज़ूर द्वारा प्रदान किये गये तीन सत्संग तथा सत्संगी भाई-बहिनों द्वारा उस समय पढ़े गये सन्तों और भक्तों की वाणी के शब्द इस पुस्तक में संगत को भेंट किये जा रहे हैं । आशा है कि हुज़ूर महाराज जी के सत्संगों के प्रकाश में हुज़ूर स्वामीजी महाराज के उपदेश और सन्तमत के सबके लिये समान तथा सार्वभौमिक सिद्धान्तों को सही अर्थों में समझने में सहायता मिलेगी ।

एस० एल० सोंधी,
सैक्रेटरी,
राधास्वामी सत्संग, ब्यास ।

सितम्बर, १९८१.
डेरा बाबा जैमलसिंह

आगरा में सत्संग तथा श्री रामनाथ मेहता

राधास्वामी सत्संग, ब्यास की सोसाइटी ने हुज़ूर महाराज जी के आगरे के दौरे सम्बन्धी पूरे प्रबन्धों का दायित्व श्री रामनाथ मेहता को सौंपा। मेहता साहिब सत्संग के दिल्ली केन्द्र के सैक्रेटरी हैं। आप बहुत पुराने और प्रेमी सत्संगी हैं और हुज़ूर महाराज बाबा सावन-सिंह जी के समय से ही सत्संग की सेवा करते चले आ रहे हैं। आप ने बहुत प्रेम और लगन के साथ सत्संग सम्बन्धी हर प्रकार के प्रबन्ध उत्तम ढंग से करने में दिन-रात एक कर दिये। अनेक कठिनाइयों और संकटों के बावजूद आप सत्संगी बहनों व भाइयों के प्रेम-पूर्ण सहयोग से हुज़ूर महाराज जी के दौर से पहले सभी प्रबन्ध पूर्ण करने में सफल हो गये। हर प्रकार के प्रबन्ध बहुत उच्च स्तर के थे। संगत के लिए हर प्रकार की सुविधा का पूरा ध्यान रखा गया था। हुज़ूर महाराज जी ने इन प्रबन्धों पर प्रसन्नता प्रकट की।

आगरा में हुज़ूर महाराज जी के आगमन से एक दिन पहले मेहता साहिब ने राधास्वामी सत्संग, ब्यास, हुज़ूर के दौरे तथा सेवादारों द्वारा किये गये हर प्रकार के प्रबन्ध के विषय में पूरी जानकारी दी। इस अवसर पर आपने महाराज जी के दौरे को सफल बनाने के लिए प्रेम और नम्रता पूर्ण शब्दों में बिनती करते हुए कहा :

"बाहर से आये हुए सभी सत्संगियों तथा सेवादारों से हाथ जोड़ कर बिनती है कि वे सभी आपस में प्रेम-प्यार का नमूना बन कर दिखायें ताकि आगरा में किसी को भी शिकायत का अवसर न मिले। आगरा में हमें अपने सतगुरु का तथा ब्यास का नाम रोशन करके जाना है ताकि यहाँ के लोग हमें सदा याद रखें।" (२४ नवम्बर, १९७८) दूसरे दिन फिर आपने संगत से निवेदन किया :

"जो सेवादार ब्यास से अथवा बाहर से आये हैं, मैं उनके आगे हाथ जोड़कर विनती करूँगा कि वे आपस में प्रेम-प्यार का व्यवहार करें। हमें बड़े ऊँचे भाग्य से सेवा करने का यह अनुपम अवसर मिला है। आइये, तन-मन से जी भर कर साध-संगत की सेवा करें और सतगुरु की दया-मेहर प्राप्त करें।"

इस अवसर पर आपने राधास्वामी सत्संग, ब्यास की ओर से प्रकाशित आध्यात्मिक साहित्य के विषय में किये गये प्रबन्ध की भी चर्चा की : "यह भी निवेदन है कि आध्यात्मिक पुस्तकें हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, अंग्रेज़ी, सिंधी और अन्य कई भाषाओं में हमारे स्टालों पर मौजूद हैं। पुस्तकों का मूल्य बहुत कम रखा गया है, ताकि सब कोई इन्हें खरीद सकें। इन पुस्तकों में बहुत से सन्तों की वाणी, हुज़ूर महाराज जी के मुख-वचन और सत्संग आदि भी शामिल हैं। परमार्थ के अनेक पहलुओं के विषय में जिज्ञासुओं की ओर से किये गये प्रश्न तथा सतगुरु की ओर से दिये गये उनके उत्तर भी प्रकाशित किये गये हैं। आप इनसे लाभ उठा सकते हैं।" (२५ नवम्बर, १९७८)

हुज़ूर महाराज जी के दौरे के अंतिम दिन मेहता साहिब ने आगरा के सभी स्थानीय अधिकारियों का धन्यवाद किया जिन्होंने पुरानी जेल का अहाता सत्संग के लिए दिया और हर प्रकार की सहायता तथा सहयोग दिया। आपने सभी सेवादारों और प्रबन्धकों का भी धन्यवाद किया जिन्होंने बिना अपने खाने-पीने और आराम की परवाह किये, रात-दिन संगत की सेवा की और प्यारे सतगुरु की खुशी प्राप्त की। आपने सतगुरु से भी प्रार्थना की कि वे भविष्य में भी आगरा आकर संगत को सत्संग और सेवा की दात प्रदान करते रहें। (२६ नवम्बर, १९७८)

विषय-सूची

विषय पृष्ठ

प्रकाशक की ओर से (iii)

आगरा में सत्संग तथा श्री रामनाथ मेहता (vi)

१. सत्संग से पहले पढ़े गये शब्द (२४-११-१९७८)

(क) मेरा मनु लोचै

(ख) मै मनि तेरी टेक मेरे पिआरे

(ग) करूँ आरती राधास्वामी

शब्द सत्संग—दिल का हुजरा साफ़ कर

सत्संग—दिल का हुजरा साफ़ कर

२. सत्संग से पहले पढ़े गये शब्द (२५-११-१९७८)

(क) माई गुरचरणी चितु लाईऐ ३

(ख) तुम साहिब करतार हो ३

(ग) इह तन मेरा चश्मा होवे ४

(घ) सुरत सुन बात री ४

(ङ) कोटि कोटि करूँ बन्दना ४

(च) पारब्रहम परमेसर सतिगुर ४

शब्द सत्संग—करमु होवै सतिगुरू मिलाए ४

सत्संग—करमु होवै सतिगुरू मिलाए ४

३. सत्संग से पहले पढ़े गये शब्द (२६-११-१९७८)

(क) ए सरीरा मेरिआ ८

(ख) लख खुसीआ पातिसाहीआ ८

(ग) गुरु का दरस तू देख री ८

शब्द सत्संग—गुरू कहें खोल कर भाई ८

सत्संग—गुरू कहें खोल कर भाई ९



हुज़ूर स्वामीजी महाराज
ਹਜ਼ੂਰ ਸੁਆਮੀ ਜੀ ਮਹਾਰਾਜ

सत्संग से पहले पढ़े गये शब्द

मेरा मनु लोचै

मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई ॥
बिलप करे चात्रिक की निआई ॥

तृखा न उतरै सांति न आवै बिनु दरसन संत पिआरे जीउ ॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई गुर दरसन संत पिआरे जीउ ॥

तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ॥
चिरु होआ देखे सारिंगपाणी ॥

धंनु सु देसु जहा तूं वसिआ मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥
हउ घोली हउ घोलि घुमाई गुर सजण मीत मुरारे जीउ ॥

इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता ॥
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता ॥

मोहि रैणि न विहावै नींद न आवै बिनु देखे गुर दरबारे जीउ ॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई तिसु सचे गुर दरबारे जीउ ॥

भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥
प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥

सेव करी पलु चसा न विछुड़ा जन नानक दास तुमारे जीउ ॥
हउ घोली जिउ घोलि घुमाई जन नानक दास तुमारे जीउ ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ० ९६)

दिल का हुजरा[१] साफ़ कर जानां[२] के आने के लिये ।
ध्यान ग़ैरों का उठा उसके बिठाने के लिये ।।१।।
चशमे दिल[३] से देख यहाँ जो जो तमाशे हो रहे ।
दिलसितां क्या क्या हैं तेरे दिल सताने के लिये ।।२।।
एक दिल लाखों तमन्ना उस पै और ज्यादा हविस ।
फिर ठिकाना है कहाँ उसके टिकाने के लिये ।।३।।
नक़ली मन्दिर मसजिदों में जाय सद अफ़सोस है ।
कुदरती मसजिद का साकिन[४] दुख उठाने के लिये ।।४।।
कुदरती काबे की तू महराब[५] में सुन ग़ौर से ।
आ रही धुर से सदा[६] तेरे बुलाने के लिये ।।५।।
क्यों भटकता फिर रहा तू ऐ तलाशे यार में ।
रासता शाहरग[७] में है दिलबर[८] पै जाने के लिये ।।६।।
मुरशिदे कामिल[९] से मिल सिदक़ और सबूरी[१०] से तक़ी ।
जो तुझे देगा फ़हम[११] शाहरग के पाने के लिये ।।७।।
गोशे बातन[१२] हो कुशादा[१३] जो करे कुछ दिनअमल[१४] ।
ला इलाह अल्लाहू अकबर[१५] पै जाने के लिये ।।८।।
यह सदा तुलसी की है आमिल[१६] अमल कर ध्यान दे ।
कुन[१७] कुराँ में है लिखा अल्लाहु अकबर के लिये ।।९।।

(संतबानी, पृ. ८८)

---

१. कोठरी, पूजा का स्थान २. प्रीतम ३. आन्तरिक आँख ४. रहने वाला ५. डाट, द्वार के ऊपर का अर्ध मंडलाकर भाग ६. आवाज़ ७. सुषुम्ना ८. प्रीतम ९. पूरे गुरु १०. विश्वाम और धैर्य ११. भेद, युक्ति १२. आंतरिक कान १३. खुल जायें १४. अभ्यास, साधना १५. पहली रूहानी मंज़िल १६. अभ्यासी, अभ्यास (अमल) करने वाला १७. हो जा, कुरान शरीफ़ में आता है, 'कुन-फ़िकुन' अर्थात् खुदा ने कहा : 'हो जा', तब हो गया ।

सत्संग

दिल का हुजरा साफ़ कर जानां के आने के लिये ।
ध्यान ग़ैरों का उठा उसके बिठाने के लिये ।।

मैं हमेशा अर्ज़ करता हूँ कि महात्मा किसी जाति, किसी धर्म, किसी देश या किसी समय में क्यों न आये हों, हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, एक ही उपदेश है । संसार में कभी भी कोई महात्मा जाति और धर्म के झगड़े पैदा करने के लिए नहीं आते और न ही कोई महात्मा किसी के हाथ में डण्डे या तलवारें देने के लिए आते हैं । वे तो हमसे केवल उस परमात्मा की भक्ति करवा कर, हमें देह के बन्धनों से मुक्त करा कर, वापस उस परमात्मा से मिलाने के लिये आते है । परन्तु हम संसार के जीव, ऐसे मालिक के भक्तों और प्यारों के चले जाने के बाद बाहरमुखी हो जाते हैं, कर्मकाण्ड में फँस जाते हैं । हम उनके सन्देश और उपदेश को बिलकुल भूल जाते हैं, बल्कि उनकी शिक्षा को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके, कौमों, मज़हबों, और मुल्कों का रूप देने की कोशिश करते हैं तथा एक-दूसरे से लड़ना झगड़ना शुरू कर देते हैं । हम ऐसा क्यों करते हैं ? कोई अपने पेट के लिये करता है, कोई अपनी इज्ज़त और मान-बड़ाई के लिये करता है । ज़रा विचार करें, जिन महात्माओं का उपदेश सम्पूर्ण संसार के लिये है, सारी दुनिया के लिये है, यदि कोई उनके उपदेश को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करने की कोशिश करेगा तो उन मालिक के भक्तों और प्यारों के साथ इससे अधिक वह और क्या अन्याय कर सकेगा ? यदि उदार हृदय से किसी भी वाणी की खोज करें, यही समझ में आता है कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, एक ही उपदेश है ।

आज मैं तुलसी साहिब जी महाराज की वाणी ले रहा हूँ, कल मैं श्री गुरु नानकदेव जी महाराज की वाणी लूँगा और परसों हुजूर श्री स्वामीजी महाराज की वाणी लूँगा। अलग-अलग महात्माओं की वाणी लेने का मेरा केवल इतना ही भाव है कि हरएक महात्मा हमें परमात्मा की भक्ति करने का एक ही तरीका समझाता है, एक ही साधन समझाता है।

तुलसी साहिब उत्तरप्रदेश में 'दक्खनी बाबा' के नाम से बहुत प्रसिद्ध महात्मा हुए हैं। आपका सम्बन्ध पूना-सतारा के राजघराने से था। आपके पिता भी मालिक के प्यारे भक्त थे। पिता का विचार था कि बच्चा बालिग हो गया है, राजपाट का कारोबार उसको सौंप कर कहीं दूर जंगलों-पहाड़ों में जाकर मालिक की भक्ति करूँगा। जब तुलसी साहिब को पता चलता है तो आप रात को घर से चोरी निकल जाते हैं। अन्त में आपने हाथरस को अपना निवास-स्थान बनाया तथा बड़े साहस और निडरता से सन्तमत का प्रचार किया। श्री हुजूर स्वामीजी महाराज के माता-पिता को भी आपकी संगति का लाभ मिला है और स्वामीजी महाराज ने भी आपकी संगति की।

तुलसी साहिब ने शेख तक़ी को समझाने के लिए बहुत से शब्द लिखे हैं। शेख तक़ी एक मुसलमान फ़कीर था, जो काबे से हज करके लौट रहा था। उसका सौभाग्य था कि उसका ख़ेमा तुलसी साहिब के डेरे के निकट लग गया, जिसके फलस्वरूप तुलसी साहिब को, शेख तक़ी को समझाने का काफी मौका मिला।

आप फ़रमाते हैं कि ऐ शेख तक़ी! हम सभी संसार के जीव चाहते हैं कि वह परमात्मा हमारे हृदय में आकर बैठे, लेकिन हम कभी यह सोच और विचार नहीं करते कि जिस स्थान पर उसको बिठाना चाहते हैं, क्या वह स्थान मालिक के बैठने के योग्य है? यदि हम किसी स्थान पर बैठते हैं तो उसको अच्छी प्रकार साफ़ करते हैं। यदि कुत्ता भी धरती पर बैठता है तो पूँछ से उस स्थान को साफ कर

लेता है। हम कितने अच्छे-अच्छे फर्श बनवाते हैं, कितने अच्छे-अच्छे कालीन बिछाते हैं, आरामदायक कुर्सियां रखते हैं, गद्दियाँ रखते हैं, फिर सोचते हैं कि यह स्थान हमारे बैठने के लायक है। परन्तु हम जिस हृदय में परमात्मा को बिठाना चाहते हैं, वह पुत्र-पुत्रियों के प्यार से गंदा हो चुका है, जातियों, धर्मों और देशों के झगड़ों से गंदा हो चुका है, शराब-कबाब की लज़्ज़तों से गन्दा हो चुका है। जहाँ परमात्मा को बिठाना चाहते हैं, वह स्थान परमात्मा के बैठने के योग्य होना चाहिये। इसलिये तुलसी साहिब फ़रमाते हैं कि ऐ शेख तकी! यदि तू परमात्मा से मिलना चाहता है तो सबसे पहले अपने अन्तर में मालिक से मिलने के लिए इश्क पैदा कर, मालिक से मिलने के लिए प्यार पैदा कर। हमारा दिल तो संसार की शक्लों और पदार्थों के लिए तड़पता है और हम मिलना मालिक को चाहते हैं। ये दोनों बातें एक साथ किस प्रकार हो सकती हैं? यदि हमारा मामूली रिश्तेदार या मित्र, हमारी आँख से दूर हो जाये तो हमें सारी रात नींद नहीं आती। हम किस प्रकार तड़पते हैं, किस प्रकार हमारी आँखों से आँसू टपक-टपक कर गिरते हैं। क्या हमने कभी भूले-भटके भी उस मालिक के वियोग में एक रात जागकर बिताई है? क्या कभी भूले-भटके भी हमारी आँखों में उसकी याद में कोई आँसू आया है? फिर हमारा मालिक से मिलाप किस प्रकार हो सकता है?

एक तो हम संसार के जीव मालिक की भक्ति ही नहीं करते, हमें समय ही नहीं मिलता। कौमों, मज़हबों और मुल्कों के झगड़ों में ही फँसे रहते हैं, शराब-कबाब की लज़्ज़तों में उलझें रहते हैं। इन इन्द्रियों के भोगों में हम इतने उलझ जाते हैं कि और तो और अपनी मौत को भी भूल जाते हैं। प्रतिदिन देख रहे हैं कि हमारे साथी हमारा साथ छोड़ते जा रहे है, बल्कि एक-एक के साथ होकर हम खुद उनको श्मशान भूमि पहुँचा कर आते हैं। आँखों से देखते है कि किसी भी वस्तु ने उसकी सहायता नहीं की, कोई वस्तु उसके साथ नहीं जा सकी, परन्तु हमारे मन में यह ख़याल रह जाता है कि इन वस्तुओं ने उसका

साथ तो नहीं दिया, पर हम शायद अपने साथ सब-कुछ इकट्ठा करके ले जायेंगे । इसलिए महात्मा हमें गफ़लत की नींद से जगाते है कि क्या आपने कभी उस समय और वक्त को भी आँखों के सामने रख कर देखा है ? उस समय कौन आपकी सहायता करेगा, कौन आपकी मदद करगो ? ये पुत्र-पुत्रियाँ, रिश्तेदार, यार-दोस्त, बहन-भाई, जिनके लिए हम इतनी बेइमानी करते हैं, ज़िन्दगी के इतने मूल्यवान आदर्शों का बलिदान करते हैं, इनको तो यह भी मालूम नहीं होता कि हम आये किस ओर से हैं और यमदूत हमें किस ओर ले जाते हैं ? हम एक दूसरे से बिछुड़ने पर, रोने पर अवश्य ज़ोर देते हैं और तो हम किसी की कोई सहायता नहीं कर सकते, कोई मदद नहीं कर सकते ।

महात्मा कहते हैं कि वास्तव में हरएक के साथ हमारा लेने-देने का सम्बन्ध है, गरज़ या स्वार्थ का प्यार है । कोई स्त्री बनकर आ गई, कोई पति बनकर आ गया, कोई बाल-बच्चे बनकर आ गये तो कोई यार-दोस्त बनकर आ गये । जितना-जितना किसी के साथ सम्बन्ध या रिश्ता है उसके पूरे होने के बाद सभी अपने-अपने रास्ते पर चल पड़ते हैं । न तो कोई किसी के साथ गया है, न कभी जा ही सकता हैं । आप सोचें, कई हमें छोड़कर जा चुके हैं और कइयों को हम छोड़कर जाने की तैयारी किये बैठे हैं । नाटक के रंगमंच पर आकर सभी अभिनेता अपना-अपना पार्ट अदा करते हैं, कोई राजा का करता है, कोई रानी का करता है, कोई खलनायक का करता है । परन्तु पार्ट अदा करने के बाद जब वे मंच से उतरते हैं, न कोई राजा होता है, न कोई रानी होती है और न ही कोई खलनायक होता । इसी प्रकार यह जो संसार है, यह एक बहुत बड़ा रंगमंच है । हम सभी अपने-अपने कर्मों के अनुसार अपना हिसाब-किताब दे रहे हैं, परन्तु हम अपना पार्ट अदा करते समय इतना इनके मोह और प्यार में फँस जाते हैं कि हम बिलकुल भूल जाते हैं कि इनके साथ हमारा लेने-देने का सम्बन्ध है, स्वार्थ का प्यार है । ये न आज तक किसी के बने हैं, न किसी के बन ही सकते हैं, परन्तु इनसे हम जो मोह करने लगते हैं, प्यार करने

लगते हैं, वह मोह और प्यार हम सबको बार-बार देह के बन्धनों की ओर खींच कर ले आता है ।

नदी में बहुत-सी लकड़ियाँ बहती दिखाई देती हैं। एक लहर उठती है, सभी लकड़ियों को इकट्ठा कर देती है, दूसरी उठती है, सभी लकड़ियों को अलग-अलग कर देती है। कर्मों की लहर उठती है हम सभी रिश्तेदार, यार-दोस्त, भाई-बहन इकट्ठे हो जाते हैं। कर्मों की दूसरी लहर उठती है, हम सभी अपने-अपने रास्तों पर चलने लगते हैं। महात्मा कहते हैं कि जिनके मोह और प्यार में फँस कर हम उस परमात्मा को भूले हुए हैं, उनमें से हरएक के साथ हमारा गरज़ या स्वार्थ का प्यार है। महात्मा कभी यह नहीं कहते कि आप इनको छोड़कर जंगलों-पहाड़ों में चले जायें। संसार में रहना है, सूरमा बनकर रहना है, परन्तु संसार में रहते हुए भी संसार के मैल में नहीं फँसना। यदि एक शहद की मक्खी शहद के किनारे पर बैठती है तो वह शहद का स्वाद भी ले लेती है और सूखे परों से उड़ भी जाती है। यदि वह शहद के अन्दर बैठ जाये तो वह शहद का स्वाद भी नहीं ले सकती और तड़प-तड़प कर अपनी जान गँवा देती हैं। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं :

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणे ॥
सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ॥ (आदि ग्रन्थ पृ० ९३८)

कि मुरगाबी पानी में रहती है, परन्तु जब उड़ती है, सूखे परों से उड़ जाती है। कमल के फूल की जड़ें पानी में होती हैं, फूल पानी से बाहर रहता है। इसी प्रकार हमारी सुरत आँखों के पीछे आकर शब्द के साथ जुड़कर इस भवसागर से पार हो सकती है। इसलिये महात्मा उपदेश करते हैं कि संसार में रहते हुए मालिक की भक्ति करनी है, मालिक से प्यार करना है।

जंगलों-पहाड़ों में जाकर हमारे अन्तर में मालिक से मिलने का कोई अधिक शौक और प्यार पैदा नहीं होता। यह सोचना हमारे मन की भूल है, क्योंकि हमारी ज़िन्दगी की जो आवश्यकतायें हैं, ज़रूरतें

हैं, वे जंगलों-पहाड़ों में भी हमारे साथ पहुंच जाती हैं। हमें किस वस्तु की आवश्यकता है ? पेट को भोजन की आवश्यकता है। इसके बिना किसी का जीवित रह सकना कठिन है। तन ढकने के लिये किसी न किसी कपड़े की आवश्यकता पड़ती है तथा गर्मी और सर्दी से बचने के लिये सिर के ऊपर किसी छत की आवश्यकता होती है, घर की जरूरत पड़ती है। ये तीन आवश्यकतायें हैं कि आप कितना भी जंगलों-पहाड़ों में छिपकर देख लें, ये वहाँ भी आपके साथ जायेंगी। वहाँ जाकर भी पेट खाना माँगेगा। आप घर का बना हुआ भोजन छोड़ेंगे, नेक कमाई, अपने श्रम की कमाई छोड़ेंगे और लोगों से माँग कर पेट भरना पड़ेगा। लेकिन पेट ने तो फिर भी खाना माँगा। सफ़ेद कपड़े उतार देंगे, गेरुए पहन लेंगे, नीले-पीले पहन लेंगे। शरीर को ढकने के लिए कपड़ों की तो फिर भी ज़रूरत पड़ी। अपने घर का सुख और आराम छोड़ेंगे, किसी गुरुद्वारे, मन्दिर, आश्रम या गुफा का सहारा लेंगे, सिर के ऊपर छत की तो फिर भी ज़रूरत पड़ी। हमसे छूटती कौन-सी चीज़ है ? हम उलटे अपाहिज बन जाते हैं। अपना भार समाज पर लाद कर बैठ जाते हैं। महात्मा प्यार से समझाते हैं कि हमें अपने कर्मों का हिसाब-किताब समाप्त करते हुए परमात्मा की भक्ति करनी है। परन्तु हम उस मालिक को भूल जाते हैं, सारा दिन देह के अहंकार में ही फँसे रहते हैं।

हम यह भी विचार नहीं करते कि हम शरीर में बैठकर अहंकार किस चीज़ का करते हैं, गर्व किस बात का करते हैं ? जवानी का अहंकार करते हैं, क्या हमें कभी किसी का बुढ़ापा नज़र नहीं आता ? क्या हमें कभी उस बुढ़ापे की उम्र में नहीं पहुँचना है ? या हमें खूबसूरती का, सुन्दरता का मान है। क्या कभी हमने बीमारों की शक्लें अस्पतालों में जाकर नहीं देखीं ? पीलिया हो जाये, अपना ही मुंह शीशे में देखने को दिल नहीं करता। क्या हमें धन-दौलत का अहंकार और गरूर है ? बड़े-बड़े सेठ-साहूकारों, राजा-महाराजाओं को हमने कंगालों की तरह सड़कों पर धक्के खाते हुए देखा है। या हमें हुकूमत का नशा

है। दुनिया ने बड़े-बड़े नेताओं को गोलियों का शिकार बना दिया है। फिर हम देह में बैठकर अहंकार किस चीज़ का करते हैं, घमण्ड किस चीज़ का करते हैं ? स्वामीजी महाराज समझाते हैं :

मन रे क्यों गुमान अब करना।
तन तो तेरा ख़ाक मिलेगा। चौरासी जा पड़ना ॥ (सार बचन, पृ. १२३)

आप कहते हैं कि किस चीज़ का अहंकार और घमण्ड करते हो ? इस शरीर का, जिसे मिट्टी में मिल जाना है ? किसी का शरीर अग्नि के सुपुर्द हो जाता है, किसी का मिट्टी के सुपुर्द हो जाता है । हमें धर्मराज के पास पेश किया जाता है जो हमारी इच्छाओं, तृष्णाओं और कर्मों के अनुसार, जिस स्थान पर ठीक समझता है, जन्म दे देता है। एक देह के बन्धनों से तो हमारा छुटकारा नहीं होता, दूसरा देह का पिंजरा पहले से ही तैयार खड़ा रहता है। मौत बाद में होती है, जन्म पहले ले लेते हैं। जन्म बाद में लेते हैं, मौत पहले ही आँखों के सामने आकर खड़ी हो जाती है। हमें दस नम्बरियों के समान हथकड़ी लगी ही रहती है। जिसको हर रोज़ कचहरी से वारंट ही आते रहें जिसकी हमेशा पुलिस वाले पूछताछ करते रहें, वह किस चीज़ का अहंकार कर सकता है, किस वस्तु का गर्व कर सकता है ? इतिहास पढ़कर देखें। बड़े-बड़े राजा, शासक और तानाशाह, जिनसे दुनिया थर-थर काँपती थी, जिनके मुख से निकला हुआ लफ़्ज, कानून की शक्ल धारण कर लेता था, आज उनका अस्तित्व कहाँ है ? आज हम उनकी कब्रों को ठोकरें मार कर निकलते हैं, उनकी हड्डियाँ हमारे पैरों के नीचे आकर खराब हो रही हैं, उनकी मिट्टी हमारी आँखों का सुरमा बन रही है। क्या हम उस समय और वक्त को बिलकुल भूल चुके हैं, जब हमारी कब्रों को भी लोग इसी प्रकार ठोकरें मारेंगे, हमारी भी हड्डियाँ पैरों के नीचे आकर ख़राब होंगी, हम भी मिट्टी में मिलकर लोगों की आँखों को अन्धा करेंगे। हम सोच लेते हैं कि मौत तो लोगों के लिए है, हमारे लिये ऐश-इशरत है, शराब-कबाब की लज्ज़तें हैं। सन्त-महात्मा हमें गफ़लत की नींद से जगाते हैं कि उस

समय को आँखों के आगे रखकर देखो, कौन तुम्हारी सहायता करेगा, कौन तुम्हारी मदद करेगा ?

यहाँ तुलसी साहिब समझा रहे हैं कि सबको मालिक की खोज करनी चाहिए, मालिक की भक्ति करनी चाहिए। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं : 'हरि की पूजा दुर्लभ है संतहु कहणा कछू न जाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ९१०) कि मालिक की भक्ति की महिमा का तो कभी वर्णन ही नहीं किया जा सकता। भक्ति तो हम सब करते हैं—कोई पुत्र-पुत्रियों के प्यार में फँस जाता है, तो कोई कौमों, मज़हबों और मुल्कों की भक्ति करता है, कोई धन-दौलत की पूजा करता है—परन्तु महात्मा समझाते हैं कि ये शक्लें, ये पदार्थ आपकी भक्ति, आपके प्यार के योग्य नहीं है, क्योंकि इनकी भक्ति, इनका प्यार आपको बार-बार देह के बन्धनों की ओर खींच कर ले आयेगा। एक ही वस्तु आपकी भक्ति और प्यार के योग्य है, वह परमात्मा है, वह परमेश्वर है, जिसके हज़ारों और अनेक नाम हरएक ने अपने-अपने प्यार में आकर रखे हैं। इसलिये प्रत्येक महात्मा हमारे अन्तर में केवल उस परमात्मा से मिलने का शौक उत्पन्न करता है, परमात्मा से मिलने का प्यार पैदा करता है।

वैसे तो संसार में हज़ारों व अनेक प्रकार के परोपकार हैं, परन्तु सन्तों-महात्माओं का एक अद्भुत और अनोखा परोपकार है। संसार का शायद कोई भी परोपकार सन्तों-महात्माओं के परोपकार तक नहीं पहुँच सकता। हुज़ूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी) बहुत सुन्दर उदाहरण दिया करते थे कि एक जेलखाने में बहुत से कैदी हैं। एक परोपकारी महसूस करता है कि गर्मी का मौसम है, इनको ठण्डा पानी पीने को नहीं मिलता। वह थोड़ा-बहुत रुपया-पैसा खर्च करके उनको मीठे, बर्फ के ठण्डे शरबत देना शुरू कर देता है। उसने कैदियों पर तरस खाकर बड़ा अच्छा परोपकार किया। दूसरा परोपकारी देखता है कि इनको खाने के लिये अच्छा भोजन नहीं मिलता। उसने और अधिक रुपये लगाकर कैदियों को अच्छे-अच्छे भोजन बनवा कर बाँटने शुरू कर दिये। उसने भी कैदियों पर बहुत अच्छा परोपकार किया।

शायद पहले से भी अधिक अच्छा परोपकार किया। तीसरा परोपकारी महसूस करता है कि सर्दी का मौसम बड़ी तेज़ी से आ रहा है, इन बेचारों के पास फटे-पुराने कपड़े हैं। उसने और अधिक धन व्यय करके अच्छे-अच्छे कपड़े उन कैदियों को देने शुरू कर दिये। जितने भी परोपकारी हैं, वे कैदियों पर परोपकार करते चले आ रहे हैं, जिससे कैदियों की दशा अच्छी होती जा रही है और वे 'सी' श्रेणी से 'ए' श्रेणी के स्तर के कैदी बनते जा रहे हैं। परन्तु इन परोपकारियों के परोपकार के बावजूद, जितने भी कैदी हैं, वे जेलखाने में ही बन्द रहते हैं, कैदी कहलाते हैं। चौथा परोपकारी, जिसके पास जेलखाने की चाबी थी, उसने चाबी लगाकर जेलखाने का दरवाज़ा ही खोल दिया और सभी कैदियों को आज़ाद कर दिया। अगर कोई ऊँचे से ऊँचा परोपकार है, तो वह चाबी वाले का परोपकार है।

सन्त-महात्मा इस चौरासी के जेलखाने की चाबी लेकर आते हैं। उनके पास कौन-सी चाबी है? वह मालिक की भक्ति है, नाम की भक्ति है, जिसके द्वारा वे हमें सदा के लिए देह के बंधनों से आज़ाद कर देते हैं। इसलिये यदि सबसे ऊँचा और पवित्र परोपकार है तो वह सन्तों-महात्माओं का परोपकार है। इसलिए तुलसी साहिब कहते हैं : 'ध्यान ग़ैरों का उठा उसके बिठाने के लिये।' ग़ैर या पराये कौन हैं? ये जो कुछ भी इस रचना में हम आँखों से देख रहे हैं, सब पराये हैं। पराये क्यों हैं? क्योंकि हमारा तो केवल एक परमात्मा है, परमेश्वर है। हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है। हम उस सतनाम समुद्र की बूँद हैं। उस मालिक से बिछुड़ कर इस माया के जाल में फँसे हुए हैं। इस स्थान पर आकर हमारी आत्मा ने मन का साथ ले लिया है। मन आगे इन्द्रियों के भोगों, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों व संसार के धन्धों का आशिक है। जो-जो कर्म हम मन के अधीन होकर कर रहे हैं, उन सबका परिणाम भुगतने के लिए सबको बार-बार इसी जगह आना पड़ता है।

इस संसार को आम सन्तों-महात्माओं ने 'कर्म-भूमि', 'कर्मों-संदड़ा

खेत' कहकर याद किया है, क्योंकि ज़मीन में जो भी बीज डालते हैं, उसी फ़सल को काटने के लिये हमें खेत में जाना पड़ता है। यदि हम मिर्च का बीज डालते हैं, मिर्च की फ़सल इकट्ठी करने चले जायेंगे। अगर हम आम के पौधे लगाते हैं तो हम आम के फल खाने के अधिकारी बन जाते हैं। हम देह में बैठकर अच्छे कर्म करेंगे तो अच्छा परिणाम भुगतने के लिए आ जायेंगे। बुरे कर्म करेंगे बुरा परिणाम भुगतने के लिये आ जायेंगे। न अच्छे कर्मों के कारण कोई देह के बन्धनों से मुक्त हो सकता है, न बुरे कर्मों के कारण जन्म-मरण के दुःखों से बच सकता है। अगर हम नेक कर्म भी करेंगे, क्या परिणाम होगा ? सेठ-साहुकार बन जायेंगे, राजा-महाराजा बन जायेंगे, कौमों, मज़हबों व मुल्कों की हुकूमत प्राप्त करके आ जायेंगे। लोहे की ज़ंजीरे उतर जायेंगी, सोने कीं ज़ंजीरें पड़ जायेंगी। 'सी' श्रेणी से बचकर 'ए' श्रेणी प्राप्त कर लेंगे। झोंपड़ी से बिस्तर उठाकर महलों में बिछा लेंगे। हाथ से झाड़ू निकल जायेगा, शासन की बाग़डोर मिल जायेगी। अधिक से अधिक स्वर्गों और बैकुंठों तक पहुँच जायेंगे। परन्तु वे भी भोग-योनियाँ हैं, निश्चित समय या अवधि के लिये हैं। इसके बाद हमें वापस इस चौरासी के जेलखाने में आना पड़ता है। यदि हम बुरे कर्म करते हैं, फिर तो हमारे लिये नरक और चौरासी तैयार ही रहती है। क्या राजा, क्या प्रजा, क्या अमीर, क्या ग़रीब, क्या स्त्री, क्या पुरुष, हम सभी संसार के जीव यहाँ आकर अपने-अपने कर्मों का हिसाब दे रहे हैं और इन कर्मों के कारण जिस भी स्थान और जामें में जाकर हमें जन्म लेना पड़ता है, उसी जामें में बैठकर दुःखों और मुसीबतों को सहन करना पड़ता है। किसी भी चोले में कभी कोई सुख प्राप्त नहीं कर सकता, कभी कोई शान्ति प्राप्त नहीं कर सकता। नीचे के ज़ामों की दशा का तो क्या वर्णन किया जाये, रूह काँपती है, सोचा ही नहीं जा सकता। आप मनुष्य के जामे के बारे में अच्छी तरह विचार करके देखें। इसको हम 'टाप ऑफ़ दी क्रिएशन' कहते हैं, 'अश्रफुल-मख़लुकात' कहते हैं। इस जामे में बैठकर हम कौन-सा सुख

प्राप्त कर सकते हैं, शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। ? कोई बेचारा बीमारी के हाथों तंग आया बैठा है, तो कोई बेकारी के हाथों तंग है। किसी को संतान नहीं होती, वह बेचारा तड़प रहा है, तो किसी को संतान ने दुःखी किया हुआ है। किसी को कर्ज़ लेने की चिन्ता है तो किसी को कर्ज़ चुकाने की। आप प्रतिदिन सड़कों पर कंगालों की दशा देखते हैं। जेलखानों में जाकर कभी अपराधियों की कहानियाँ सुनकर देखें। अस्पतालों में कभी बीमारों की चीखें सुने। संसार में दुःख ही दुःख, मुसीबतें ही मुसीबतें नज़र आ रही हैं। कभी अखबार पढ़कर देखें, रेडियो लगा कर देखें, किस प्रकार जातियों, धर्मों और राष्ट्रों के झगड़े जारी रहते हैं। कितने ग़रीबों का खून होता है, कितनी स्त्रियाँ विधवा होती हैं और कितने बच्चे अनाथ होते हैं। जिस संसार और नगरी में यह हालत है कि हम सब रोटी-कपड़े के लिये तड़पते और भटकते फिरते हैं, उसमें कोई सुख कैसे प्राप्त कर सकता है, शान्ति कैसे प्राप्त कर सकता है ?

आप सोचें यदि मनुष्य के जामें में रहकर किसी को सुख और शान्ति नहीं मिलती, क्या भेड़ों के जामे में, मुर्गियों के जामे में शान्ति मिलेगी जिनकी गर्दन पर हमारे पेट के लिये रात-दिन बेदर्दी से छुरियाँ चल रही हैं! गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'पिर सचे ते सदा सुहागणि ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४) कि हमारी आत्मा स्त्री है और वह परमात्मा उसका पति है। जब तक यह आत्मा रूपी स्त्री परमात्मा रूपी पति की भक्ति करके परमात्मा से मिलाप नहीं करती, इसका देह के बन्धनों से कभी छुटकारा नहीं हो सकता, यह कभी भी सुहागिन नहीं हो सकती। इसलिये कोई हमारा अपना है तो वह केवल एक परमात्मा है, परमेश्वर है। यह जो भी रचना हम आँखों से देख रहे हैं, सब पराई और ग़ैर है, सब लेने-देने के सम्बन्ध हैं, जिसके बाद सब साथ छूट जायेगा। जब हम पिछले जन्मों के रिश्तेदारों को भूले हुए हैं, जिनके लिये अब रात-दिन भटकते और तड़पते फिरते हैं, उनको कौन याद रखेगा ? एक स्थान पर मृत्यु होती है, उस घर

वाले कितने दुःखी होते हैं, वही आत्मा दूसरे शरीर में जाकर जन्म लेती है, उस घर वाले खुशी मना रहे होते हैं। वह आत्मा पिछलों के साथ अफसोस करेगी, या अगले लोगों के साथ खुशी मनायेगी। इसलिये महात्मा कहते हैं कि यह सब स्वार्थ का प्यार है। हमारा इस संसार में न कोई अपना है और न कोई अपना बन ही सकता है। यदि कोई अपना है तो केवल एक परमात्मा है, केवल वही अपना बन सकता है और उसको ही अपना बनाना चाहिये। तुलसी साहिब शेख तकी को समझाते हैं कि ऐ शेख तकी ! अगर तू परमात्मा से मिलना चाहता है तो उससे प्रेम पैदा कर, प्यार पैदा कर। जब तक तेरे अन्दर मालिक से मिलने की तड़प नहीं है, प्रेम नहीं है, भक्ति नहीं है, मालिक से तेरा मिलाप किस प्रकार हो सकता है ? हमारा हृदय संसार की शक्लों और पदार्थों के लिये तड़पता है, मिलना हम मालिक से चाहते हैं। ये दोनों बातें एक किस प्रकार हो सकती हैं ?

चश्मे दिल से देख यहाँ जो जो तमाशे हो रहे।
दिलसितां क्या क्या हैं तेरे दिल सताने के लिये ॥

अब फ़रमाते हैं कि ये जो भी संसार में सैर, रंग व तमाशे दिखाई देते हैं कि दुनिया महलों में रह रही है, हवाई जहाज़ों में सैर कर रही है, अच्छे अच्छे कपड़े पहनती है, अच्छे-अच्छे भोजन खा रही है। ये सभी वस्तुएँ हमारे मन को सुख देने के लिये नहीं, बल्कि हमारे मन को दुःख देने के लिये हैं। हम उस मालिक को भूलकर इन शक्लों और पदार्थों में सुख व शान्ति ढूँढने का प्रयत्न करते हैं परन्तु जितना इन में सुख और शान्ति हम ढूँढने का प्रयत्न करते हैं, उतना हम संसार के जीव रात-दिन दुःखी होते चले जा रहे हैं, क्योंकि जिन वस्तुओं में सुख ढूँढ रहे हैं, वे सभी अस्थाई हैं, इनका सुख और आराम भी अस्थाई ही हो सकता है। ये जो भी हमें सुख दिखाई दे रहे हैं, समय पाकर दुःखों में बदलने शुरू हो जाते हैं।

अच्छी तरह सोचकर देखें, हमारा विवाह होता है तो हमारे मन में कितनी खुशी होती है। उसी साथी से मन-मुटाव शुरू हो जाये,

हमारा सारा घर नरक बन जाता है। जिस समय सन्तान होती है, कितनी दावतें करते हैं, पुण्य-दान करते हैं, कितनी खुशी मनाते हैं। हरएक का अनुभव हैं, वे बाल-बच्चे कभी बीमार हो जाते हैं, कभी नालायक हो जाते है, कभी उस संतान को परमात्मा वापस बुला लेता है। देखें वही संतान हमारे लिये कितने दुःख का कारण बनकर खड़ी हो जाती है। फिर हम हुकूमत के नशे में खुशी ढूंढने की कोशिश करते हैं। जिस समय लोग हमारे जुलूस निकालते हैं, अखबारों में हमारी तस्वीरें छापते हैं, आदर-मान करते हैं, हमारे मन को कितनी खुशी महसूस होती है, लेकिन उन नेताओं का इतिहास भी हमारी आँखों के सामने है। उनको ही हम गोलियों का निशाना बना देते हैं, उठाकर जेलों में डाल देते हैं, पैरों के नीचे उनकी मिट्टी पलीत करना शुरू कर देते हैं। रातो-रात राज्य पलट जाते हैं, लोग हमें गोलियों का निशाना बना देते हैं, फिर हमें मालूम होता है कि यह हुकूमत दुःख का कारण हैं या सुख का। फिर हम मांस-शराब में सुख ढूँढने की कोशिश करते हैं, ये चीज़ें शायद खाने-पीने में बहुत स्वादिष्ट लगती हैं, लेकिन जब शरीर की बीमारियों का हिसाब-किताब देना पड़ता है, जेलों में चक्कियां चलानी पड़ती हैं, कचहरियों में जाकर खराब होना पड़ता है, मुकद्दमे भुगतने पड़ते हैं फिर होश आती है कि ये सुख का कारण है या दुःख का। इन शक्लों और पदार्थों में हमें सुख और शान्ति क्यों नहीं मिलती ? स्वामी जी कहते हैं : 'तजो मन यह दुःख सुख का धाम।' (सार बचन, पृ. ११९) कि यह जो संसार है, परमात्मा ने दुःखों और सुखों का बनाया है। गूरु नानक साहिब कहते हैं : 'हरख सोग का नगरु इहु कीआ।' (आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५) परमात्मा ने यह रचना ही दुःखों-सुखों की बनाई है। कोई मनुष्य ऐसा न मिलेगा जिसे सुख ही सुख प्राप्त हों, कभी दुःखों का सामना ही न करना पड़ता हो। न ही कभी आपको कोई ऐसा मनुष्य मिलेगा जिसे दुःख ही दुःख भुगतने पड़ते हों, कभी सुख के सांस न आये हों। यदि दस दिन सुख में बीत जाते हैं, थोड़ा-बहुत दुःखों का सामना

करना पड़ता है। यदि दस दिन दुःख में बीत जाते हैं तो थोड़ा-बहुत सुख के सास आ जाते हैं।

ये जितने भी हमारे सुख हैं, ये पिछले जन्मों के पुण्यों के कारण हैं जितने भी दुःख हैं, ये हमारे पापों के कारण हैं। पुण्य और पाप इकट्ठे होते हैं तब हमें मनुष्य का जामा मिलता है। हमें इस शरीर में बैठ कर उन पुण्यों का भी हिसाब देना है, उन पापों का भी हिसाब देना है। उन पुण्यों का हिसाब देते हुए आज हम सुखी हो रहे हैं, उन पापों का हिसाब देते हुए आज हम दुःखी हो रहे हैं। यदि हमारे केवल पुण्य होते हम स्वर्गों में बैठे होते। यदि हमारे केवल पाप होते तो हम नरको में जलते होते। यह ठीक है कि किसी के ज्यादा पुण्य हैं, थोड़े पाप हैं, इसलिए वह हमें ज़्यादा सुखी नज़र आता है, थोड़ा दुःखी दिखाई देता है। किसी के पापों का बोझ ज्यादा हो जाता है, पुण्यों का कम रह जाता है, वह हमें ज़्यादा दुःखी दिखाई देता है, थोड़ा सुखी नज़र आता है।

महात्मा कहते हैं कि दुख-सुख तो हरएक को शरीर में बैठकर भुगतने ही पड़ते हैं। सन्त-महात्मा इस संसार को सुख की नगरी बनाने के लिये नहीं आते हैं। यदि संतों-महात्माओं का इस संसार में आने का यही ध्येय होता कि यह संसार सुख की नगरी बन जाये तो आप सोचें, आज तक अवश्य बन जानी चाहिये थी। इतिहास पढ़कर देखते हैं कि हरएक जाति में, धर्म में, देश में और हर समय में किस-किस चोटी के महात्मा आये हैं—राम आये हैं, कृष्ण आये हैं, बुद्ध आये हैं, ईसा आये हैं, मुहम्मद साहिब आये हैं, गुरु नानक साहिब आये हैं, श्री हुजूर स्वामीजी महाराज आये हैं या और कई सन्त-महात्मा संसार में आये हैं। यदि ऐसे महात्माओं के आने के बावजूद यह संसार आज तक सुख की नगरी नहीं बन सका तो हम अब क्या आशा कर रहे हैं कि हम इस संसार को सुख की नगरी बना सकेंगे। इस संसार के कांटे न तो आज तक किसी से दूर हुए हैं और न हो ही सकते हैं यदि हिम्मत करके अपने पैरो में बूट डाल लेते हैं तो ये संसार के कांटे

हमारे पैरों में असर नहीं करते। ये दुःख-सुख की समस्यायें इसी प्रकार रहनी हैं, कभी भी किसी से सुलझ नहीं सकतीं। परन्तु महात्मा ज़िन्दगी व्यतीत करने का, मालिक की भक्ति करने का, ऐसा तरीका और साधन समझाते हैं कि जिस मार्ग पर चलकर हमारा ध्यान मालिक की भक्ति की ओर चला जाता है और हम सदा के लिए दुःखों-सुखों से ऊपर उठ जाते हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं, 'जिन्ही घरु जाता आपणा से सुखीऐ भाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ४२५) कि जो मनुष्य अपने घर वापस पहुंच जाते हैं, अर्थात् परमात्मा की भक्ति करके परमात्मा में समा जाते हैं, वे सदा के लिये सुख और शान्ति प्राप्त कर लेते हैं।

तुलसी साहिब शेख तकी को समझा रहे हैं कि संसार के सैर, रंग, तमाशे आदि देखकर मत भूलो कि संसार सुख की एक बड़ी नगरी है। इसके अन्दर दृष्टि डाल कर देखो, दुःख ही दुःख, मुसीबतें ही मुसीबतें दिखाई दे रही है। एक तस्वीर को आप बाहर से देखते हैं, कितनी सुन्दर है—उसका फ्रेम अच्छा लगता है, शीशा भी बड़ा सुन्दर मालूम पड़ता है। आप उस तस्वीर का पिछला रुख देखें, गत्ता और कील दिखाई देते हैं। तस्वीर बहुत बदसूरत लगती है। इसी प्रकार संसार को महलों में रहते देखकर, अच्छे-अच्छे भोजन करते देखकर, हवाई जहाज़ों में सैर करते देखकर, हम सोच लेते हैं कि यह संसार बहुत सुखी होगा, परन्तु उनके बीच जाकर देखें, दुःख ही दुःख, मुसीबतें ही मुसीबतें भरी पड़ी हैं। किसी से भी पूछकर देख लें, जिस प्रकार एक फोड़े में से पीप निकलता है, हरएक के अन्दर से दुःख फूट-फूट कर निकलते हैं। गुरु नानक साहिब ने कहा था: 'नानक दुखीआ सभु संसारु। सो सुखीआ जो नाम अधार ॥' कि संसार के सब जीव अपने-अपने स्थान पर दुःखों और मुसीबतों में फंसे हुए हैं। जिन्होंने उस मालिक का आसरा ले लिया, वे ही शरीर में बैठकर सुख और शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। यहां तुलसी साहिब फ़रमाते हैं कि आप व्यर्थ ही संसार की शक्लों और पदार्थों को देखकर न भूलें कि इनमें

आप सुख प्राप्त कर सकेंगे। यदि सुख प्राप्त करना चाहते हैं तो आप केवल मालिक की भक्ति में ही प्राप्त कर सकेंगे।

आप देखें, एक बच्चा अपने पिता की अंगुली पकड़ कर बाज़ार में जाता है। उसको प्रदर्शनी में प्रत्येक वस्तु सुन्दर दिखाई देती है। मिठाइयों की दुकानें बड़ी सुन्दर दिखाई दे रही हैं, बिजलियां चमकती हैं, बच्चों के खिलौने पड़े हुए हैं। वह बच्चा सोचता है कि शायद उसको बाज़ार के साज़-सामान से खुशी प्राप्त हो रही है। यदि कहीं गलती से वह अपने पिता की अंगुली छोड़ देता है, प्रदर्शनी का सभी साज-सामान उसी स्थान पर होता है, परन्तु वह बच्चा रोना शुरू कर देता है, चिल्लाना शुरू कर देता है। फिर बच्चा महसूस करता है कि वह उस प्रदर्शनी में से खुशी तब तक ही प्राप्त कर सकता था, जब तक उसने अपने पिता की अंगुली पकड़ी हुई थी। हमारा पिता कौन है? केवल एक परमात्मा है, परमेश्वर है। अगर हमारा ध्यान उस मालिक की भक्ति और प्यार की ओर है तो हम इस संसार में भी चार दिन सुख और शान्ति से काट जायेंगे, वापस जाकर परमात्मा से भी मिल जायेंगे। यदि परमात्मा को भूल जाते हैं तो सारा संसार हमारे लिये दु:ख रूप बन जाता है।

आप विचार करके देखें, जिनको परमात्मा ने संसार में सब कुछ दिया है, ज़िन्दगी का नेक साथी दिया है, अच्छा स्वास्थ्य दिया है, आदर दिया है, धन-दौलत भी दी है, भाव कि मालिक ने संसार की वस्तुओं की ओर से कोई कमी नहीं रखी, फिर भी अकेले बैठकर देखें, मन में खुशी नहीं आती। सब-कुछ होते हुए भी यह अकेलापन या उदासी हमारा पीछा नहीं छोड़ती, यह आत्मा का आकर्षण या खिचाव है, अपने असल अथवा मूल स्रोत की ओर। जब तक हम आत्मा को अपने असल की ओर नहीं जाने देंगे, इसके अन्दर सुख नहीं आ सकता, कभी शान्ति नहीं आ सकती। सो तुलसी साहिब प्यार के साथ समझाते हैं कि दुनिया की शक्लें, संसार के रंग-रूप को देखकर न भूलो। इनमें तुमको कभी सुख प्राप्त न होगा। यदि सुख प्राप्त

करना चाहते हो तो मालिक की भक्ति से प्राप्त कर सकते हो, मालिक के प्यार से प्राप्त कर सकते हो।

एक दिल लाखों तमन्ना उस पै और ज्यादा हविस।
फिर ठिकाना है कहां उसके टिकाने के लिये॥

अब आप समझाते हैं कि हमारा मन एक है, लाखों इच्छाएँ, लाखों तृष्णाएँ हम करते हैं। पहली इच्छाएँ और तृष्णाएँ पूरी नहीं होतीं, मन रात-दिन और अधिक उत्पन्न करने में लगा हुआ है। तुलसी साहिब कहते हैं कि जब मन की ऐसी अवस्था है तो हम मालिक की भक्ति किस प्रकार कर सकते हैं, हम मालिक की भक्ति में सफल किस प्रकार हो सकते हैं? पहले तो हम संसार के जीव मालिक की भक्ति ही नहीं करते, हमें समय ही नहीं मिलता। हमें जातियों, धर्मों व देशों के झगड़े ही नहीं छोड़ते, शराब-कबाब के स्वाद ही नहीं छोड़ते, पुत्र-पुत्रियों के प्यार नहीं छोड़ते। यदि हमारा ध्यान कभी मालिक की भक्ति की ओर जाता भी है तो हम संसार की इच्छाएँ, संसार की तृष्णाएँ लेकर परमात्मा की भक्ति करते हैं। उसका क्या परिणाम होता है? उन इच्छाओं और तृष्णाओं को पूरा करने के लिए हमें बार-बार फिर जन्म लेना पड़ता है। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'देदा दे लैंदे थकि पाहि।' (आदि ग्रन्थ, २, जपु) कि भाई परमात्मा तो देते-देते कभी तंग नहीं होता, तुम लेते-लेते थक जाओगे। जो कुछ परमात्मा से मांग रहे हो, परमात्मा अवश्य पूरा करेगा। वह उस स्थान पर तुम्हें जन्म देगा, जहां जाकर अपनी इच्छाओं और तृष्णाओं को अच्छी प्रकार पूरा कर सको। जब तंग आकर परमात्मा से परमात्मा को मांगोगे, परमात्मा की भक्ति परमात्मा से मिलने के लिये करोगे, तब ही वह परमात्मा दया, मेहर और बख्शिश करके तुम्हें अपने साथ मिला लेगा।

इसलिये महात्मा कहते हैं कि हमें अपने प्रारब्ध कर्मों का प्रसन्नता-पूर्वक हिसाब देना है, मालिक की भक्ति केवल मालिक से मिलने के लिये करनी है, दुनिया की इच्छाओं और तृष्णाओं को पूरा करने के

लिये नहीं करनी है। सन्त नामदेव जी कहते हैं : 'जौ राजु देहि त कवन बडाई ।। जौ भीख मंगावहि त किआ घटि जाई ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ५२५) हे परमात्मा ! यदि तू संसार का राजपाट, तख्तो-ताज भी मुझे दे देगा तो फिर भी मुझे तेरी ही भक्ति करनी है, तेरे साथ ही प्यार करना है। यदि मुझे संसार में दर-दर की ठोकरें भी खानी पड़ेंगी, फिर कौन-सा मुझे दाता का द्वार छोड़कर चले जाना है । मैं तो इसी दर का कुत्ता हूं, इसी दर का मँगता हूँ। जिस प्रकार समुद्री जहाज़ के कौए को उस जहाज़ के सिवाय और कोई बैठने का ठिकाना नहीं होता, उसी प्रकार मेरी आत्मा के लिये उस परमात्मा के सिवाय कौन-सा ठिकाना हो सकता है ? जो मर्ज़ी हो कर लो, फिर भी मालिक के भाने, मालिक के हुक्म में आना पड़ता है। इसलिये तुलसी साहिब कहते हैं कि सदा मालिक की रज़ा में रहकर भक्ति करनी चाहिये, मालिक के हुक्म में रहकर भक्ति करनी चाहिये ।

आप देखें, हम अपने छोटे बच्चे को आया के साथ बाहर खेलने के लिये भेज देते हैं। यदि बच्चा रोता है, आया हर प्रकार से उसका दिल बहलाने की कोशिश करती है, उसको तोतलियां कहानियां सुनायेगी, खिलौने देगी और टॉफी आदि देगी। यदि बच्चे का दिल लग जाता है तो माता-पिता भी निश्चित होकर घर के काम-काज में लगे रहते हैं। अगर बच्चा किसी चीज़ से नहीं बहलता, माता-पिता के लिये तड़फता है, आप देखें, किसी भी माता-पिता से सहन नहीं होता, भागकर बच्चे को गोद में उठा लेते हैं, गले से लगा लेते हैं। इसी प्रकार जब हम इस रचना के खिलौनों से खेलने में लगे हुए हैं, वह परमात्मा भी हमें भूला हुआ है। जब हर ओर से ध्यान हटाकर मालिक की ओर केन्द्रित करते हैं तभी वह परमात्मा दया-मेहर बख्शिश करके हमें अपने साथ मिलाता है। तुलसी साहिब कहते हैं कि तुम मालिक के ग्राहक बनकर मालिक की भक्ति करो, संसार के ग्राहक बनकर कभी मालिक की भक्ति न करो।

कभी हम संसार के जीव डरते हुए मालिक की भक्ति करते है कि

परमात्मा ने इतनी दौलत दी है, इज़्ज़त दी है, इतना घर में ठाठ-बाठ है, यदि मालिक की भक्ति नहीं करेंगे तो बच्चे अयोग्य हो जायेंगे, व्यापार में घाटा पड़ जायेगा, समाज में निरादर हो जायेगा। सो हम डरते हुए मालिक की भक्ति करते हैं। यह भी मालिक की भक्ति करने का सही तरीका नहीं है। यह संसार मालिक की भक्ति इस प्रकार करता है, जैसे लोग सर्प की पूजा करते हैं। कोई भी साँप की पूजा इसलिये नहीं करता कि उसका साँप से प्यार है। लोग साँप के डंक या विष से बचने के लिये, साँप को दूर रखने के लिये उसकी भक्ति करते हैं। हम कभी भी यह ख़याल लेकर मालिक की भक्ति नहीं करनी चाहिये। हम मालिक की भक्ति करते हैं, क्योंकि हमारे अन्दर मालिक से मिलने का सच्चा इश्क हैं, सच्चा प्रेम और सच्चा प्यार है।

धर्म का आधार प्यार है, डर नहीं। तुलसी साहिब कहते हैं कि डरते हुए मालिक की भक्ति न करो, सच्चा इश्क पैदा करके, सच्चा प्रेम पैदा करके मालिक की भक्ति करो, इच्छाएं और तृष्णाएं रखकर मालिक की भक्ति न करो, मालिक के भाने या हुक्म में रहकर मालिक की भक्ति करो। हुक्म में रहने का अर्थ है कि अपने प्रारब्ध कर्मों का प्रसन्नतापूर्वक हिसाब देना है, और मालिक से केवल मालिक को माँगना है। आप देखें, ये इच्छाएँ-तृष्णाएँ कौन पैदा करता है? हमारा मन पैदा करता है। हम उन्हें पूरी किससे कराते हैं? मालिक से करवाते हैं। हम मन को समझाने की कोशिश नहीं करते कि तू मालिक के हुक्म के अनुसार अपने आपको ढालने की कोशिश कर, परमात्मा को अवश्य दिन-रात समझाने में लगे हुए हैं कि तू हमारे मन की इच्छा के अनुसार चलने की कोशिश कर। भक्ति मन की कर रहे हैं, कि मालिक की कर रहे हैं? इसलिये महात्मा कहते हैं कि सदा मालिक के हुक्म में रहकर, मालिक के भाने में रहकर मालिक की भक्ति करो।

नक़ली मन्दिर मसजिदों में जाय सद अफ़सोस है।
कुदरती मसजिद का साकिन दुख उठाने के लिये॥

जब हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा

होता है, हमारा ध्यान मालिक की भक्ति की ओर जाता है तो हम नकली मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, गिरजों की ओर दौड़ते हैं और उनमें मालिक को ढूँढते हैं। कभी आकाश की ओर देखते हैं कि शायद परमात्मा ऊपर से आयेगा, कभी जंगलों-पहाड़ों में जाकर उस मालिक की खोज करनी शुरू कर देते हैं, कभी महात्माओं के सत्संग में जाकर उस परमात्मा की खोज करनी शुरू कर देते हैं। परन्तु तुलसी साहिब कहते हैं कि जिस स्थान पर हमें परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है, उस स्थान पर हम कभी परमात्मा को ढूँढने का प्रयत्न नहीं करते। वह कौन-सा स्थान है ? वह हमारा शरीर है, हमारी देह है, हमारा वजूद है। जिसको मालिक मिला है, अपने अन्तर में मिला है। जिसको मालिक मिलेगा, अपने अन्तर में ही मिलेगा। यदि कोई प्रयोगशाला है, जिसके अन्दर जाकर हम मालिक की खोज कर सकते हैं तो वह केवल हमारा शरीर, हमारी देह और हमारा वजूद है। कबीर साहिब कहते हैं :

ज्यों तिल महिं तेल है, ज्यों चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुझ में, जाग सके तो जाग ॥

जिस प्रकार तिलों में तेल और पत्थर में अग्नि होती है, उसी प्रकार परमात्मा हम सब के अन्दर है। ईसा मसीह ने बाईबिल में समझाया है :

'Repent, kingdom of God is at hand'

कि जो कुछ पिछले जन्मों में कर्म कर चुके हो, उनका पश्चात्ताप करो, उनका हिसाब-किताब समाप्त करो। परमात्मा कहीं बाहर नहीं है। वह हमारे शरीर, तुम्हारी देह और तुम्हारे वजूद में बैठा हुआ है। गुरु साहिब कहते हैं : 'सदा हजूरि दूरि न जाणहु ॥ गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ११६) भाई, वह परमात्मा तुझे जंगलों-पहाड़ों में नहीं मिलेगा, सरोवरों में नहीं मिलेगा, न मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में मिलेगा, न वह कहीं आसमान के पीछे छिपा बैठा है। वह चौबीस घण्टे तेरे साथ है, तेरे शरीर और तेरी देह के अन्दर

बैठा हुआ है। गुरुमुखों के पास जाकर शब्द की कमाई करके अपने अन्दर उस मालिक को पहचानने की कोशिश कर। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'गुरमुखि होवै सो काइआ खोजै होर सभ भरमि भुलाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ७५४) जो मालिक के आशिक, भक्त और प्यारे हैं, वे सदा देह या शरीर में जाकर मालिक की खोज करते हैं, बाकी सारी दुनिया के जीव, वहमों और भ्रमों में फँसकर यहीं दिन रात भूले फिरते हैं। किसी महात्मा की वाणी पढ़ कर देख लें, हरएक महात्मा यही कहता है कि अगर कोई सच्चे से सच्चा गुरुद्वारा है, मन्दिर है, मस्जिद है, ठाकुरद्वारा है, गिरजा है, तो वह हमारा शरीर है, हमारी देह, हमारा वजूद है। ऋषियों-मुनियों ने हमारी देह को नर-नारायणी देह कह कर समझाया है। यह वह देह है जिसको नारायण ने स्वयं बनाया है, जिसमें नारायण स्वयं बिराजमान है, जिसके अन्दर ही हमारी आत्मा नारायण होने का गौरव प्राप्त कर सकती है। हज़रत ईसा ने हमारे शरीर को 'जीवित परमात्मा का मन्दिर' कहकर याद किया है। भाव है कि यह वह मन्दिर है जिसमें जीवित परमात्मा रहता है। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० १३४६) कि तुम्हारा शरीर ही मालिक के रहने का वास्तविक हरि-मन्दिर है। जब भी तुमको मालिक से मिलने का ज्ञान या अनुभव होगा, केवल शरीर के अन्दर होगा, देह और वजूद के अन्दर होगा।

ज़रा विचार करें, हम संसार के जीव कैसी बुद्धि के मालिक हैं कि जो हम उस मालिक के रहने के लिए स्थान बनाते हैं, उन मन्दिरों मस्जिदों, और गुरुद्वारों में दिन-रात जाकर परमात्मा को ढूंढने में लगे हुए हैं, बनिस्बत उस स्थान के जो परमात्मा ने ख़ुद अपने रहने के लिये बनाया है और जिसके अन्दर ही परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है। फिर आप देखें, कि ये जो अपने बनाये हुए मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे हैं, इनको हम कितना साफ-सुथरा रखते हैं। वहां संगमरमर के पत्थर लगाते हैं, बड़े कीमती कालीन बिछाते हैं। वहां जाकर कोई पाप और

बुरा कर्म नहीं करते, ऊँचा नहीं बोलते क्योंकि वह मालिक के रहने का स्थान हैं, इसकी पवित्रता हमें अवश्य कायम रखनी चाहिये। लेकिन जो स्थान परमात्मा ने स्वयं बनाया है, जिसके अन्दर स्वयं परमेश्वर बैठा हुआ है, जिसके अन्दर से ही सब को परमेश्वर मिल सकता है, उस शरीर में कभी माँस डाल देते हैं, कभी शराब डाल देते हैं, कभी उसमें बैठकर पाप और खोटे कर्म करने शुरू कर देते हैं, कभी एक-दूसरे के गले काटने शुरू कर देते हैं, कभी एक-दूसरे की निन्दा-चुगली करते हैं। अपनी बनाई हुई वस्तु का आदर करते हैं, परमात्मा की बनाई हुई वस्तु का आदर नहीं करते।

इतिहास पढ़कर कितनी शर्म आती है कि अपने बनाये हुए मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों की गलती से कोई दीवार भी गिर जाती है तो हम उस मालिक के सजाये हुए हरि-मन्दिरों को हज़ारों की संख्या में गिराने के लिए जाते हैं। मनुष्य मनुष्य से घृणा करता है, ईंटों-पत्थरों से प्यार करता है। फिर हम अपने आपको शहीद कहलाते हैं, धर्म के रखवाले कहलाते हैं। यदि एक-दूसरे की गर्दन काटने से ही किसी को परमात्मा मिल सकता है तो इससे सस्ता सौदा और कौन-सा हो सकता है? परन्तु हमारा यह ख़याल ग़लत है, क्योंकि जिनका परमात्मा से प्यार होता है, वे परमात्मा की सृष्टि से भी प्यार करते हैं। देखें, एक परमात्मा है, उसी परमात्मा ने हम सबको पैदा किया है, वही हरएक के अन्दर बैठा हुआ है। हरएक को अपने अन्दर ही उस परमात्मा की खोज करनी है। मैं कहता हूँ कि अगर फिर भी कोई किसी से नफ़रत करता है, वह परमात्मा से नफ़रत करता है। अगर कोई कौम किसी कौम को हिकारत की नज़र से देखती है, यदि कोई धर्म किसी दूसरे धर्म की गर्दनें काटने की योजनायें बनाता है, उस कौम और धर्म में मालिक से मिलने का शौक ही पैदा नहीं हुआ, प्यार ही पैदा नहीं हुआ। गुरु साहिब कहते हैं :

जीअ जंत सभि तिस दे सभना का सोई ॥
मंदा किसनो आखीऐ जे दूजा होई ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ० ४२५)

आप कहते हैं, हे परमात्मा, संसार के सब जीव तूने खुद पैदा किये हैं, हरएक के अन्दर तू खुद बैठा हुआ है, मन्दा और बुरा इन को मैं तब कहूं, यदि इनको किसी और ने पैदा किया हो। सो जिन महात्माओं के पीछे लगकर, हम जाति व धर्म बनाकर, आपसी झगड़े खड़े करने की कोशिश करते हैं, देखो, उनकी असली शिक्षा हमारे विचार को कितना ऊंचा ले जाने का प्रयत्न करती है। कबीर साहिब कहते हैं :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ।।
एक नूर से सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ।।
(आदि ग्रन्थ, पृ० १३४९)

उस मालिक का नूर और प्रकाश हम सब में है, न कोई अच्छा है, न कोई बुरा है, सब अपने-अपने कर्मों का हिसाब दे रहे हैं। इसलिये तुलसी साहिब प्यार से समझाते हैं कि वह परमात्मा कहीं बाहर नहीं है। वह हमारे शरीर में है, हमारी देह और वजूद में है। हम बाहर नकली मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों में जाकर उस मालिक को ढूंढने में लगे हुए हैं, परन्तु जो असली मन्दिर, असली मस्जिद, असली गुरुद्वारा परमात्मा ने हरएक को बख्शा हुआ है, उस शरीर में जाकर कोई खोज नहीं करता।

कुदरती काबे की तू महराब में सुन ग़ौर से।
आ रही धुर से सदा तेरे बुलाने के लिये ।।

क्योंकि शेख तकी काबे से हज करके लौट रहा था और मुसलमानों का ख़याल है कि काबे में जाकर हज करने से हम निज़ात (मुक्ति) प्राप्त कर सकते हैं, इसलिये आप प्यार से समझाते हैं कि ऐ शेख तकी ! जिस काबे में जाने से, हज करने से, हम निज़ात प्राप्त कर सकते हैं, वह काबा परमात्मा ने हरएक को दिया हुआ है। वह कौन-सा काबा है ? वह हमारा शरीर है, हमारी देह और हमारा वजूद है। काबे में एक मस्जिद है, जिसकी मेहराब में खड़े होकर मौलवी कलमा पढ़ता है, बांग देता है। मुसलमानों का विचार है कि उस बांग को

सुनने से, उस कलमे को सुनने से, हम निजात प्राप्त कर सकेंगे। तुलसी साहिब फ़रमाते हैं कि यह शरीर असली काबा है और इसकी जो मेहराब है, यह माथा है, क्योंकि मेहराब की शक्ल भी इसी प्रकार की होती है। इस कुदरती काबे में जाकर इसकी मेहराब में अपना ख़याल इकट्ठा करो, जहां मालिक की दरगाह की ओर से कलमा पढ़ा जा रहा है, कलमा-ए-इलाही आ रहा है, बांगे-आसमानी उठ रही है। आंखों के पीछे हरएक के अन्दर शब्द या नाम धुनकारें दे रहा है। उस शब्द रूपी कलमे या कलाम को सुनो। जब तक हम यहां ख़याल इकट्ठा नहीं करते, हम उस शब्द को सुन नहीं सकते, उस शब्द के प्रकाश को अन्तर में पकड़ नहीं सकते और उसको सुने बिना कभी निजात प्राप्त नहीं कर सकते, मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते और हमारा हज कभी पूरा नहीं हो सकता। आपके समझाने का भाव है कि हमारा शरीर ही असली काबा है और मालिक से मिलने का मार्ग भी परमात्मा ने हरएक के अन्दर रखा हुआ है।

हमारी रूहानी यात्रा पैरों के तले से शुरू होती है और सिर की चोटी पर जा कर समाप्त होती है। इस यात्रा की दो मंज़िलें हैं—एक आंख तक है, दूसरी आंख से ऊपर है। हमारे शरीर में जो आत्मा और मन का स्थान है जिसको क़ोई 'शिव-नेत्र' कहता है, कोई 'दिव्य-चक्षु' कहता है, कोई 'घर दर' कहता है और कोई 'मुक्ति का दरवाज़ा' कहता हैं, जिसको मुसलमान फकीरों ने 'नुक्ता-ए-सवैदा' कहा है या ईसा ने 'सिंगल आई' और 'थर्ड आई' कहकर वर्णन किया है, वह स्थान हरएक की आंखों के पीछे है। यहां से हमारा ख़याल नीचे नौ द्वारों की ओर उतरता है। नौ द्वार क्या हैं ?—दो आंखें हैं, दो कानों के सुराख़ हैं, दो नाक के सुराख़ हैं, मुख हैं, नीचे दो इन्द्रियों के सुराख़ है। इन नौ द्वारों के ज़रिये ख़याल सारे संसार में फैल जाता है। हमें इस फैले हुए ख़याल को वापस लाकर दोनों आंखों के पीछे, भौंहों के बीच इकट्ठा करना है। जब आंखों के पीछे ख़याल इकट्ठा करते हैं तो..., गुरु नानक साहिब कहते है :

नउ दरि ठाके धावतु रहाए ।। दसवै निजघरि वासा पाए ।।
ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती गुरमती सबदु सुणावणिआ ।।
(आदि ग्रन्थ, पृ. १२४)

कि जब आप नौ द्वारों से ख़याल निकालकर आंखों के पीछे इकट्ठा करेंगे, तो आप अपने घर के दरवाज़े पर पहुँच जायेंगे। उस घर के दरवाज़े की निशानी क्या है ? उस नुक्ते या केन्द्र पर हरएक के अन्दर अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है। वह मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़ जो मालिक की दरगाह से आ रही है, वह चोरों में भी है, ठगों में भी है, साधू, संतों और महात्माओं में भी है। वहां न किसी जाति का प्रश्न है, न किसी धर्म का प्रश्न है। आप हिन्दू होकर अन्दर जायें, सिक्ख, ईसाई होकर अन्दर जायें, जो भाग्यशाली आंखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा करेगा, वह अपने अन्दर शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देगा। हम उस आवाज़ के द्वारा अपने घर की दिशा निश्चित कर लेते हैं, उस प्रकाश के द्वारा अन्दर हम अपना रूहानी सफ़र तय करना शुरू कर देते हैं और मंज़िल-दर-मंज़िल वापस अपने घर पहुँच जाते हैं। इसलिये हरएक महात्मा हमारे ख़याल को उस शब्द की ओर लाता है, उस नाम की ओर लाता है।

ये जितने भी हमारे धर्म हैं, इन सभी के रीति-रिवाज़ अपने-अपने हैं, क्योंकि ये हमारे अपने बनाये हुए हैं, लेकिन जो आध्यात्मिकता है, असलियत है, हकीकत है, वह प्रत्येक धर्म की तह में एक ही वस्तु है। प्रत्येक महात्मा ने अलग-अलग जाति, धर्म और देश में बैठकर, अलग-अलग शब्दों के द्वारा हमारे अन्दर केवल उस एक रूहानियत को प्राप्त करने का शौक और प्यार पैदा किया है। श्री हुज़ूर स्वामीजी महाराज उसको 'मूल-कलाम', 'नाम', 'शब्द', 'निर्मल नाद' कहकर याद करते हैं। मुसलमान फ़कीरों ने उसको 'कलमा', 'बांग-आस्मानी', 'कलामे-इलाही', 'निदा-ए-सुल्तानी' आदि कई शब्दों द्वारा याद किया है। ऋषि-मुनियो ने उसको 'आकाशवाणी', 'राम नाम', 'राम धुन', 'निर्मल नाद', 'दिव्य ध्वनि' कह कर याद किया है। गुरु नानक

साहिब इसको 'गुर की वाणी', 'धुर की वाणी', 'सच्ची वाणी', 'अमर', 'हुकम', 'अकथ कथा', 'हरि कीर्तन' आदि कई शब्दों द्वारा याद करते हैं। आम संतों-महात्माओं ने उसको शब्द या नाम कह दिया है। हज़रत ईसा ने उसको 'वर्ड' या 'लोगोस' कहकर वर्णन किया है। चीन के महात्मा ने उसी को 'टाउ' कहकर वर्णन किया है। हमें शब्दों के वाद-विवाद में नहीं उलझना चाहिये। हमें तो अपने शरीर में उस केन्द्र पर ध्यान इकट्ठा करना है, जहां दाता दात दे रहा है, अमृत रूपी नाम बरस रहा है।

जिस अमृत को पीकर हमें अमर होना है, वह अमृत कभी किसी को बाहर नहीं मिलता, वह अमृत चौबीस घण्टे हरएक की आंखों के पीछे बरस रहा है। गुरु साहिब कहते हैं: 'नउ दरवाजे नवे दर फीके रसु अंमृत दसवे चुईजै ॥" (आदि ग्रन्थ, पृ. १३२३) कि आंखों के नीचे-नीचे केवल इन्द्रियों के भोग हैं, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों के स्वाद हैं। लेकिन जो रस से भरा हुआ अमृत है, वह 'दसवे-चुईजै' आपकी आंखों के पीछे बरस रहा है। अब जब तक हम उस केन्द्र पर ध्यान इकट्ठा नहीं करते, जहां पर दाता दान देता है बख़्शिश करता है, उसकी बख़्शिश से हम लाभ किस प्रकार उठा सकेंगे? यदि रात-दिन ज़बरदस्त वर्षा हो रही हो, परन्तु हमारा बर्तन ही उलटा पड़ा हो, उस बर्तन के अन्दर पानी की एक बूँद भी न जा सकेगी। अगर हिम्मत करके बर्तन को सीधा कर देंगे तो पहली नहीं दूसरी तीसरी बारिश में बर्तन भर जायेगा। जिस मन को आंखों के पीछे आकर, उस अमृत को पीना है, अमर होना है, निर्मल होना है, पवित्र होना है वह मन यहां से उतर कर नौ द्वारों के ज़रिये सारे संसार में फैला हुआ है। इसलिये जब तक सुमिरन और ध्यान के द्वारा हम फैले हुए ख़याल को वापस आंखों के पीछे इकट्ठा नहीं करेंगे, हम उस अमृत को किस प्रकार पी सकेंगे? बिना उस अमृत को पिये हम अमर किस प्रकार होंगे? हमारा जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा किस प्रकार होगा? इसको महात्माओं ने सच्चा नाम कहकर याद किया है। सच्चा इसलिये कहते हैं कि यह

आंखों से देखा नहीं जा सकता, जबान से इसका वर्णन नहीं किया जा सकता, कानों से सुना नहीं जा सकता, जिसको हुज़ूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी) 'अनरिटन ला' और 'अनस्पोकन लैंगवेज़' कह कर याद किया करते थे।

हज़रत ईसा ने बाईबल में समझाया है : "आंखें होने के बावजूद तुम देख नहीं सकते, कान होने के बावजूद तुम सुन नहीं सकते ।" गुरु साहिब वाणी में कहते हैं :

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवित मरणा ॥
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १३९)

आप उस हुकम, शब्द या नाम को पकड़कर अपने खसम अर्थात् परमात्मा से मिलेंगे जिसको न आपकी आंख देखती है, न आपकी ज़बान जिसका वर्णन करती है, न आपके कान जिसे सुनते हैं, जहां आप के हाथ नहीं पहुँचते, न ही आपके पैर पहुँचते हैं और जिस चीज़ को नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर आंखों के पीछे लाकर प्राप्त करना है। इसको जीवित मरना या 'डाई टु लिव' महात्माओं ने इसलिये कहा है कि जब भी किसी की मौत आती है, पहले उसके हाथ-पैर ठण्डे हो जाते हैं, फिर उसकी टांगे ठण्डी हो जाती हैं, फिर उसका शरीर ठण्ठा होना शूरू हो जाता है। उसके अन्दर आतमा भी होती है, उसको कई वार अपने आप का होश भी होता है, वह शरीर को छोड़ कर एक ओर हो जाती है, हम कहते हैं कि वह मर गया। महात्मा कहते हैं कि यदि आप सच्चे शब्द का स्वाद प्राप्त करना चाहते हैं, सच्चे नाम की लज्ज़त हासिल करना चाहते हैं तो इसी युक्ति और साधन के द्वारा जीवित मरें अर्थात् सुमिरन और ध्यान के द्वारा जीते जी अपने ख़याल को आंखों के पीछे इकट्ठा करें।

वह शब्द लिखने, पढ़ने और बोलने का विषय नहीं है। उस शब्द

ने धरती पैदा की है, उसी शब्द के आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं। गुरु साहिब कहते हैं : 'नामै ही ते सभु किछु होआ ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५३) कि यह सब कुछ जो आप आंखों से देखते हैं, यह परमात्मा ने नाम के द्वारा पैदा किया है। विचार करें कि जिस चीज़ ने संसार की रचना की है, जिसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं, वह हमारे लफ्ज़ किस प्रकार हो सकते हैं? वह शक्ति हमारे पढ़ने, लिखने और बोलने में कैसे आ सकती है ? उसकी मियाद, उसका समय कोई कैसे निश्चित कर सकता है ? या उसके इतिहास की क्या खोज कर सकेगा ? गुरु नानक साहिब कहते हैं :

सबदि धरती सबदि आकास । सबदे सबदि भइआ प्रगास ॥
सगली सृसटि सबदि के पाछे । नानक सबदि घटे घटि आछे ॥

(प्राण संगली,)

उस शब्द ने धरती पैदा की, सूरज पैदा किया, चन्द्रमा पैदा किया। उस शब्द ने सारी दुनिया की रचना पैदा की है। वह शब्द कहां है ? 'नानक सबदि घटे घटि आछे', वह शब्द हर घट के अन्दर अर्थात् हर जीव के अन्दर धुनकारें दे रहा है। जब तक हम अन्दर उस शब्द से ख़याल नहीं जोड़ते, हमारा किसी का भी मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही नहीं उठता। गुरु साहिब कहते हैं : 'बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. १२४) उस शब्द और नाम की कमाई के बिना न किसी के अन्दर से अज्ञानता का अँधेरा दूर होगा, न किसी को परमात्मा मिलेगा, न किसी का देह के बन्धनों से छुटकारा होगा। जो कुछ प्राप्त होगा, उस शब्द की कमाई से प्राप्त होगा, उस नाम की कमाई से प्राप्त होगा । स्वामीजी महाराज कहते हैं :

गुरु कहे खोल कर भाई। लग शब्द अनाहद जाई ॥
बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छूटे न कूज़ा ॥

(सार बचन, पृ. १६१)

कि शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई भी मालिक की पूजा

नहीं है, कोई भी मालिक की भक्ति नहीं है। संसार के जीव यों ही वहमों-भ्रमों में फँस कर भूले फिरते हैं : 'नामु बिसारि चलहि अन मारगि अंत कालि पछुताही ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ११५३)। नाम की कमाई करने का ढंग छोड़कर, जिस भी मार्ग पर चलने की कोशिश करेंगे, अन्त में मौत के समय पछताना पड़ेगा कि व्यर्थ ही अपने कीमती समय को फिज़ूल की बातों में फँस कर नष्ट कर दिया। क्यों पछताना पड़ता है ?

विणु नावै दरि ढोई नाही ता जमु करे खुआरी ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४)

शब्द और नाम की कमाई के बिना हम मंज़िल पर नहीं पहुँच सकेंगे, हमें यमदूतों के हाथों खराब होना पड़ेगा, जन्म-मरण के दुःखों में आना पड़ेगा। कबीर साहिब कहते हैं :

जब ही नाम हिरदे धर्यों, भयो पाप को नास।
जैसे चिनगी आग की, पड़ी पुरानी घास ॥

कितना ही सूखे घास का ढेर लाकर इकट्ठा क्यों न कर लें, आग की एक चिगारी सारी घास को जला कर राख कर देती है। हमारे साकत पुरुषों के कितने बुरे-खोटे, पाप और कर्म क्यों न हों, एक शब्द और नाम की कमाई सब कर्मों का हिसाब-किताब ही खत्म कर देती है। कबीर साहिब कहते हैं :

इह तन है कागज़ की पुड़िया, बूँद पड़त गल जाओगे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, नाम बिना पछताओगे ॥

जिस प्रकार कागज़ की पुड़िया पर पानी डालें, कागज़ गल जायेगा, उसी प्रकार यह जो शरीर है, इसे अग्नि के सुपुर्द हो जाना है, मिट्टी के सुपुर्द होकर गल जाना है। यदि देह में बैठकर शब्द और नाम की कमाई नहीं करते, अन्त में मौत के समय पछताना पड़ेगा कि व्यर्थ ही अपना कीमती समय नष्ट कर दिया। आपने इस नाम की यहाँ तक महिमा की है :

नाम जपत कुष्टी भला, चुइ चुइ पड़े जिस चाम।
कंचन देह किस काम की, जा मुख नाहीं नाम ॥

आप कहते हैं कि यदि कोई कोढ़ी, जिसके कोई निकट बैठने को, जिसकी कोई शक्ल देखने को तैयार नहीं है, शब्द और नाम की कमाई में लगा हुआ है तो वह लाख दरजे उस पुरुष से अच्छा है, जो सोने की देह अर्थात् संसार के सभी हार-शृंगार लेकर बैठा है और उस परमात्मा को भूला हुआ है। यही हज़रत ईसा ने फ़रमाया है :

आत्मा की पूजा ही परमपिता की पूजा है।
और कोई पूजा पिता को प्रसन्न नहीं करती ।।

कि शब्द और नाम की कमाई ही एक ऐसी भक्ति है, जो मालिक को स्वीकार है, और कोई भक्ति परमात्मा को स्वीकार नहीं है। यहाँ तुलसी साहिब प्यार से समझाते हैं कि यह हमारा शरीर असली काबा है। आप अपना हज पैरों के तलुओं से शुरू करें, यह हज सिर की चोटी पर पूरा होगा। आँखों के नीचे-नीचे इन्द्रियों के भोग हैं, शराब-कबाब के स्वाद हैं। नाम रूपी अमृत आँखों के पीछे बरस रहा है, इसलिये आँखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा करो। इस मेहराब में मालिक की दरगाह से कुदरती कलमे की आवाज़ आ रही है। वहाँ वह 'कलामे–इलाही', 'बाँगे–आस्मानी' उठ रही है। आप यहाँ ख़याल को इकट्ठा करके उस शब्द की आवाज़ को पकड़कर उस कलमे, उस 'गुरु की वाणी', 'धुर की वाणी' को सुनो, जिसके द्वारा आपको निजात या मुक्ति प्राप्त होगी, आपका जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा हो जायेगा।

क्यों भटकता फिर रहा तू ऐ तलाशे यार में।
रास्ता शाहरग में है दिलबर पै जाने के लिये ।।

अब आप फ़रमाते हैं कि क्यों व्यर्थ जंगलों-पहाड़ों में परेशान होकर घूम रहे हो ? परमात्मा न तो जंगलों-पहाड़ों, ईंटों-पत्थरों में आज तक किसी को मिला है और न ही मिल सकेगा। परमात्मा भी हरएक के शरीर में है और मालिक से मिलने का मार्ग भी हरएक के शरीर के अन्दर है। आप फ़रमाते हैं कि आँखों के पीछे आकर शाहरग में से गुज़र कर हमें अपने घर पहुँचना है। शाहरग का अर्थ गले की

घुंडी नहीं है ? जिसका ऋषियों-मुनियों ने सुषुम्ना नाड़ी कहकर वर्णन किया है। उसी को मुसलमान फ़कीरों ने शाहरग कहा है। आपके कहने का भाव यह है कि मालिक भी हमारे अन्दर है, मालिक से मिलने का मार्ग भी हमारे शरीर में है। आप सोचें, हम संसार के सभी जीव अच्छी तरह समझते हैं कि मालिक एक है, यह भी पता है कि मालिक ने हम सबको एक जैसा बनाया है, यह भी समझते हैं कि मालिक हरएक के शरीर में विराजमान है, यह भी पता है कि हरएक को अपने अन्दर ही परमात्मा मिलना है। आप सोचें, यह किसकी बुद्धि में आता है कि हिन्दुओं के अन्दर तो मालिक ने अपने मिलने का कोई और रास्ता रख दिया है, सिक्खों और ईसाइयों में मालिक ने अपने मिलने का कोई और रास्ता रख दिया है। जो शरीर में जाकर मालिक की खोज करते हैं, उनके लिये तो केवल एक ही साधन है, एक ही रास्ता है। जो बाहरमुखी हुए बैठे हैं, कर्म-काण्ड में फँसे हुए हैं, वे अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार रात दिन भटकते और तड़पते फिरते है। इसलिये तुलसी साहिब प्यार से समझाते हैं कि मालिक हमारे शरीर में है और उस से मिलने का मार्ग भी हमारे शरीर में है।

मुरशिदे कामिल से मिल सिदक़ और सबूरी से तक़ी।
जो तुझे देगा फ़हम शाहरग के पाने के लिये॥

महात्मा के समझाने से यह तो समझ में आ गया कि परमात्मा शरीर के अन्दर है और मालिक से मिलने का मार्ग भी शरीर के अन्दर है। अब मन में ख़याल आता है कि महात्माओं ने अनेक ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र लिखे हैं, प्रत्येक मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे में परमात्मा का कीर्तन किया जाता है, महात्माओं के सत्संग में उसका वर्णन किया जाता है, क्या हम अपनी युक्ति और साधन के द्वारा शरीर और देह के अन्दर मार्ग की खोज कर सकेंगे या उस आध्यात्मिक यात्रा को तय कर सकेंगे ? यहाँ तुलसी साहिब फ़रमाते हैं कि यदि शरीर में जाकर उस रूहानी सफ़र को तय करना चाहते हो तो किसी कामिल मुर्शिद, मालिक के

सच्चे भक्त और प्यारे की खोज करो, किसी पूरे गुरुमुख की संगति और सम्पर्क करो और सिदक व सबूरी अर्थात् सच्चाई और धैर्य के साथ उन पर भरोसा करो, उन पर विश्वास करो। स्वामीजी महाराज कहते हैं :

प्रीत प्रतीत गुरु की करना।
नाम रसायन घट में जरना ।। (सार बचन, १२३)

आप समझाते हैं कि हमें गुरुमुखों की संगति करनी है, उनका सत्संग करना है, उनसे प्यार करना है, उन पर भरोसा और विश्वास करना है और जो नाम की कमाई करने का साधन वे बताते हैं, जिस प्रकार रसायन हमारी हड्डियों में समा जाता है, उनका उपदेश भी हमारे शरीर में रच जाना चाहिए, समा जाना चाहिए। तुलसी साहिब भी प्यार से समझाते हैं कि मालिक को अपने अन्दर प्राप्त करने की युक्ति और साधन का गुरुमुखों से ही पता लगता है। सबको पता है कि लकड़ी में आग है, परन्तु न तो आग दिखाई देती है और न ही उस लकड़ी से कोई लाभ उठा सकता है। यदि युक्ति का पता चल जाये, तरीके का पता लग जाये तो उसी लकड़ी में से आग निकल आती है। हम उसको देख भी सकते हैं और उससे लाभ भी उठा लेते हैं। इसी प्रकार वह राम नाम की ज्योति हरएक की आँखों के पीछे जल रही है, शब्द की आवाज़ सब की आँखों के पीछे धुनकारें दे रही है, लेकिन जब तक युक्ति का पता नहीं चलता, साधन और तरीका मालूम नहीं पड़ता, न हम उस धुन को पकड़ सकते हैं, न उस ज्योति को देख सकते हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

जिसका गृहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ।।
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ।।
(आदि ग्रन्थ, २०५)

भाई, जिस परमात्मा ने तुझे पैदा किया है, उसने नाम रूपी-दौलत, तेरे अन्दर, तेरे लिये रखकर उसका भेद गुरुमुखों को सौंप दिया है। तू मन-बुद्धि से, ग्रन्थ-पोथियां पढ़कर कितना उस चीज़ की

खोज करने की कोशिश क्यों न करे, कभी सफल न हो सकेगा, जब तक तू गुरुमुखों की शरण प्राप्त नहीं करता, उनके बताये हुए उपदेश पर नहीं चलता। इसीलिये तुलसी साहिब शिक्षा देते हैं कि अन्तर में परमात्मा की खोज करने के लिये सच्चे मुर्शिद की संगति करनी चाहिये।

गोशे बातन हो कुशादा जो करे कुछ दिन अमल।
ला इलाह अल्लाहू अकबर पै जाने के लिये॥

अब आप फ़रमाते हैं कि यदि हम मालिक के भक्तों और प्यारों के कथनानुसार शरीर और देह के अन्दर जाकर खोज करते हैं, समाधि लगाते हैं, तो हमारे अन्दर के कान खुल जाते हैं, हम अन्दर उस कलमे, शब्द या नाम की आवाज़ को सुनना शुरू कर देते हैं, हमारी आन्तरिक आँखें खुल जाती हैं, हम उस प्रकाश को अन्तर में देखना शुरू कर देते हैं। उस आवाज़ को सुनकर, उस प्रकाश को देखकर अल्लाहु, अकबर में—जिसको हम सहस्रदल कमल कहते हैं—पहुँच जाते हैं। आप शेख तकी को समझा रहे हैं, इसलिये आपने अरबी और उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है। इसी को ऋषियों-मुनियों ने संस्कृत और हिन्दी में 'सहस्रदल-कमल' कहकर वर्णन किया है। ये वस्तुएँ वही हैं, रूहानी सफ़र भी वही तय करना पड़ता है, मंज़िलें वही हैं, आप किसी भी भाषा में उनका कोई भी नाम रख लें। इसलिये आप फ़रमाते हैं कि यदि हम महात्माओं के कहने के अनुसार सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा करके शब्द से जोड़ेंगे अन्दर शब्द के प्रकाश को देखेंगे तो हम अन्तर में आध्यात्मिक यात्रा तय करनी शुरू कर देंगे, हम मंज़िल-दर-मंज़िल अपने घर की और आना शुरू कर देंगे।

यह सदा तुलसी की है आमिल अमल कर ध्यान दे।
कुन क़ुरां में है लिखा अल्लाहु अकबर के लिये॥

सब कुछ वर्णन करके आप फ़रमाते हैं कि ऐ शेख तक़ी, जो कुछ भी मैंने तुम्हें ऊपर समझाने की कोशिश की है, यह मैंने कोई ग्रन्थ-

पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़ कर नहीं बताया है, यह मेरा अपना निजी अनुभव है। महात्मा सदा अपना निजी अनुभव समझाने के लिये ही आते हैं। दादू साहब कहते हैं :

दादू देखा दीदा सब कोई कहत शुनीदा।

कि दादू ने जो आँखों से देखा है, वही कहता है, लोग तो सुनी-सुनाई बातें करते हैं। आपके कहने का भाव है कि जब हम आध्यात्मिक उन्नति करके अन्दर जाते हैं तो पता चलता है कि उस कुन, कलमे या शब्द ने सारे संसार की रचना की है। उस कुन की समझ आ जाती है, उस कुन, उस शब्द और नाम के साथ हमारा ख़याल जुड़ जाता है, जिसने संसार की रचना की है, जिसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं और जो कुन, नाम या शब्द सबके अन्दर आँखों के पीछे धुनकारें दे रहा है। सभी महात्मा अन्तर में उस कुन या शब्द के साथ ख़याल को जोड़ने का उपदेश देते हैं। मैंने शुरू में अर्ज़ की थी कि यदि उदार हृदय के साथ किसी भी महात्मा की वाणी की खोज करके देखें तो यही पता लगता है कि प्रत्येक महात्मा का एक ही उपदेश है, एक ही सन्देश है। अतएव हमें भी चाहिये कि तुलसी साहिब के उपदेश से फायदा उठा कर अपने ख़याल को अन्दर शब्द के साथ जोड़ें, नाम के साथ जोड़ें।

सत्संग से पहले पढ़े गये शब्द

माई गुरचरणी चितु लाईऐ

माई गुरचरणी चितु लाईऐ ॥
प्रभु होइ कृपालु कमलु परगासे सदा सदा हरि धिआईऐ ॥
अंतरि ऐको बाहरि ऐको सभ महि ऐकु समाईऐ ॥
घटि अवघटि रविआ सभ ठाई हरि पूरन ब्रहमु दिखाईऐ ॥
उसतति करहि सेवक मुनि केते तेरा अंतु न कतहू पाईऐ ॥
सुखदाते दुखभंजन सुआमी जन नानक सद बलि जाईऐ ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. ५२८)

तुम साहिब करतार हो

तुम साहिब करतार हो हम बन्दे तेरे ।
रोम रोम गुन्हेगार है बखसो प्रभु मेरे ॥१॥
दसौं दुवारे मैल है, सब गंदम गंदा ।
उत्तम तेरो नाम है, बिसरै सो अन्धा ॥२॥
गुन तजिकै औगुन कियो तुम सब पहिचानो ।
तुम सूं कहा छिपाइये हरि घट की जानो ॥३॥
रहम करो रहमान सूं यह दास तिहारो ।
भक्ति पदारथ दीजिये आवागवन निवारो ॥४॥
गुरु सुकदेव उबारि लो, अब मेहर करीजै ।
चरनहिं दास गरीब को अपनो करि लीजै ॥५॥

(बाणी चरणदास जी)

इह तन मेरा चश्मा होवे

अलफ़ इह तन मेरा चशमा होवे, मैं मुरशद वेख न रज्जां हू ॥
लूँ लूँ दे मुढ लख लख चश्मां, इक खोलां इक कज्जां हू ॥
इतनिआं डिठिआं सबर न आवे, होर किते वल भज्जां हू ॥
मुरशद दा दीदार है बाहू, मैनूँ लख करोड़ाँ हज्जां हू ॥

चे चढ़ चन्ना तू कर रुशनाई, ते ज़िकर करेंदे तारे हू ॥
गलीआँ दे विच फिरन निमाणे, लालाँ दे वणजारे हू ॥
शाला मुसाफ़र कोई न थीवे, ते कख जिन्हां ते भारे हू ॥
ताड़ी मार उड़ाओ न बाहू, असीं आपे उडण हारे हू ॥

सीन सुण फ़रियाद पीराँ दिआ पीरा, मैं आख सुणावाँ कीनूँ हू ॥
तेरे जेसा मैनूँ होर न कोई, मैं जेहीआँ लक्ख तैनूँ हू ॥
फोल न कागज़ बदीआं वाले, दर तों धक्क न मैनूँ हू ॥
मैं विच ऐड गुनाह न होंदे, बाहू तूँ बखशेंदों किनूँ हू ॥

सीन सुण फ़रियाद पीराँ दिआ पीरा, मेरी अरज़ सुणीं कन धर के हू ॥
मेरा बेड़ा अड़िआ विच कप्परां दे, जित्थे मच्छ न बहिंदे डर के हू ॥
शाह जैलानी महबूब सुबहानी, मेरी खबर लिओ झट करके हू ॥
पीर जिन्हा दा मीरां बाहू, सोइ कदधी लगदे तर के हू ॥

चे चढ़ चन्ना तूँ कर रुशनाइ, तारे ज़िकर करेंदे बाहु तेरा हू ॥
तेरे जेहे चंन कई सौ चढ़दे, सानूँ सजणां बाझ अँधेरा हू ॥
जित्थे चंन ऐ साडा चढ़दा, ऊथे कदर नहीं कुझ तेरा हू ॥
जिसदे कारण असां जनम गवाइआ, बाहू यार मिलेसन इक वेरां हू ॥

(कलाम हज़रत सुलतान बाहु)

सुरत सुन बात री

सुरत सुन बात री । तेरा धनी बसे आकाश ।।१।।
तजो संग जार री । तू देख पिया परकाश ।।२।।
चलो गुरू की लार री । तू पावे अजर निवास ।।३।।
गहो सरन कोई साध री । जो मिले शब्द घर बास ।।४।।
तन पिंजरा यह काल का । क्यों करें पराई आस ।।५।।
दस इन्द्री के भोग की । तेरे पड़ी गले में फाँस ।।६।।
नौ द्वारन में बँध रही । अब चैन नहीं इक स्वाँस ।।७।।
दसवीं खिड़की खोल री । कर परम बिलास ।।८।।
सतगुरु पूरे कह रहे । तू मान बचन विश्वास ।।९।।
राधास्वामी नाम भज । होयँ कर्म सब नाश ।।१०।।

(सार बचन, पृ. १४५)

कोटि कोटि करूँ बन्दना

कोटि कोटि करूँ बन्दना, अरब खरब दंडौत ।।
राधास्वामी मिल गये, खुला भक्ति का सोत ।। (सारबचन, पृ. २)

लोक वेद में जो पड़े, नाग पाँच डस खायँ ।
जन्म जन्म दुख में रहें, रोवें और चिल्लायँ ।।
जिन सतगुरु के बचन की, करी नहीं परतीत ।
नहिं संगत करी संत की, वे रोवें सिर पीट ।।

(सारबचन, पृ. ३३७)

राधास्वामी रक्षक जीव के, जीव न जाने भेद ।
गुरु चरित्र जाने नहीं, रहे कर्म के खेद ।।
खेद मिटे गुरु दर्श से, और न कोई उपाय ।
सो दर्शन जल्दी मिलें, बहुत कहा मैं गाय ।।

(सारबचन, पृ. २८०)

पारब्रह्म परमेसर सतिगुर

पारब्रह्म परमेसर सतिगुर आपे करणैहारा ।।
चरण धूड़ि तेरी सेवकु मागै तेरे दरसन कउ बलिहारा ।।
मेरे रामराइ जिउ राखहि तिउ रहीऐ ।।
तुधु भावै ता नामु जपावहि सुखु तेरा दिता लहीऐ ।।
मुकति भुगति जुगति तेरी सेवा जिस तूं आपि कराइहि ।।
तहा बैकुंठ जह कीरतनु तेरा तूं आपे सरधा लाइहि ।।
सिमरि सिमरि सिमरि नामु जीवा तनु मनु होइ निहाला ।।
चरण कमल तेरे धोइ धोइ पीवा मेरे सतिगुर दीन दइआला ।।
कुरबाणु जाई उसु वेला सुहावी जितु तुमरै दुआरै आइआ ।।
नानक कउ प्रभ भए कृपाला सतिगुरु पूरा पाइआ ।।

तुधु चिति आए महा अनंदा जिसु विसरहि सो मरि जाए ।।
दइआलु होवहि जिसु ऊपरि करते सो तुधु सदा धिआए ।।
मेरे साहिब तू मै माणु निमाणी ।।
अरदासि करी प्रभ अपने आगै सुणि सुणि जीवा तेरी बाणी ।।
चरण धूड़ि तेरे जन की होवा तेरे दरसन कउ बलि जाई ।।
अंमृत बचन रिदै उरिधारी तउ किरपा ते संगु पाई ।।
अंतर की गति तुधु पहि सारी तुधु जेवडु अवरु न कोई ।।
जिसनो लाइ लैहि सो लागै भगतु तुहारा सोई ।।
दुइ कर जोड़ि मागउ इकु दाना साहिब तुठै पावा ।।
सासि सासि नानकु आराधे आठ पहर गुण गावा ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ. ७४९)

करमु होवै सतिगुरू मिलाए ।। सेवा सुरति सबदि चितु लाए ।।
हउमै मारि सदा सुखु पाइआ माइआ मोहु चुकावणिआ ।।
हउ वारी जीउ वारी सतिगुर कै बलिहारणिआ ।।
गुरमति परगासु होआ जी अनदिनु हरिगुण गावणिआ ।।
तनु मनु खोजे ता नाउ पाए ।। धावतु राखै ठाकि रहाए ।।
गुर की बाणी अनदिनु गावै सहजे भगति करावणिआ ।।
इसु काइआ अंदरि वसतु असंखा । गुरमुखि साचु मिलै ता वेखा ।।
नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ।।
सचा साहिबु सची नाई ।। गुरपरसादी मंनि वसाई ।।
अनदिनु सदा रहै रंगि राता दरि सचै सोझी पावणिआ ।।
पाप पुंन की सार न जाणी ।। दूजै लागी भरमि भुलाणी ।।
अगिआनी अंधा मगु न जाणै फिरि फिरि आवण जावणिआ ।।
गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ ।। हउमै मेरा ठाकि रहाइआ ।।
गुर साखी मिटिआ अंधिआरा बजर कपाट खुलावणिआ ।।
हउमै मारि मंनि वसाइआ ।। गुर चरणी सदा चितु लाइआ ।।
गुर किरपा ते मनु तनु निरमलु निरमल नामु धिआवणिआ ।।
जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ।। जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ।।
नानक नामु धिआइ सदा तूं जंमणु मरणु सवारणिआ ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ. १०९)

सत्संग

माझ महला ३, घरु १

करमु होवै सतिगुरू मिलाए ॥ सेवा सुरति सबदि चितु लाए ॥

कल मैंने तुलसी साहिब महाराज की वाणी ली थी, आज मैं गुरु नानक साहिब के घर की वाणी ले रहा हूँ और कल हुज़ूर स्वामीजी महाराज की वाणी लूंगा। भिन्न-भिन्न महात्माओं की वाणी लेने से मेरा केवल यही भाव है कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, हरएक महात्मा का एक ही उपदेश है। मैंने कल भी अर्ज़ की थी कि महात्मा चाहे किसी जाति, किसी धर्म, किसी देश या किसी भी काल में क्यों न आये हों, सभी महात्मा परमात्मा की भक्ति करने का एक ही तरीका, एक ही साधन समझाते हैं। संसार में कभी भी कोई महात्मा जाति या धर्म बनाने के लिये नहीं आते और न ही किसी के हाथ में डण्डे और तलवारें देने के लिये आते हैं। वे तो केवल हमसे मालिक की भक्ति करा कर, नाम की भक्ति करा कर, हमें वापस जाकर उस परमात्मा से मिलाने के लिए आते हैं। परन्तु साधारण तौर पर ऐसे मालिक के भक्तों और प्यारों के जाने के बाद हम संसार के जीव बाहरमुखी हो जाते हैं, कर्मकांड में फँस जाते हैं। हम उनके वास्तविक सन्देश और उपदेश को तो बिलकुल भूल जाते हैं, बल्कि उनकी शिक्षा को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके जातियों, धर्मों और देशों की शक्ल देने का प्रयत्न करते हैं और एक-दूसरे से लड़ना-झगड़ना शुरू कर देते हैं। हम ऐसा क्यों करते हैं? कोई अपने पेट के लिये करता है, कोई अपने आदर और मान-बड़ाई के लिये करता है। आप सोच कर देखें कि जिन महात्माओं की शिक्षा सम्पूर्ण संसार के लिए है, कुल आलम के लिए है, यदि कोई उनके अनुभवों को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करने का

यत्न करता है तो इससे ज्यादा उन मालिक के भक्तों और प्यारों के प्रति और क्या अन्याय कर सकेगा ? यदि हम उदार हृदय से किसी भी महात्मा की वाणी की खोज करें तो यही समझ में आता है कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, हरएक महात्मा का एक ही उपदेश है ।

श्री गुरु अमरदास जी इस शब्द में समझाते हैं कि यह जो भी रचना, संसार आप आँखों से देख रहे हैं, यह सब अपने आप ही पैदा नहीं हुआ । इसका कोई न कोई रचनाकार है, इसको कोई न कोई पैदा करने वाला है, इसकी देखभाल करने वाला है, इसको चलाने वाला है । वह कौन है ? एक परमात्मा है, अकालपुरुष है, वाहिगुरु है, परमेश्वर है, जिसके हज़ारों व अनेक नाम हमने अपने-अपने प्यार में आकर रखे हैं । हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, हम उस सतनाम समुद्र की बूँदें हैं । कबीर साहिब कहते हैं : 'कहु कबीर इहु राम की अंसु ॥' (आदि ग्रन्थ, ८७१) कि यह जो आत्मा है, उस राम या परमात्मा का अंश है । गुरु नानक साहिब समझाते हैं :

आतम महि रामु राम महि आतमु चीन्हसि गुर बीचारा ॥
(आदि ग्रन्थ, पृ. ११५३)

आत्मा के अन्दर वह परमात्मा है, परमात्मा के अन्दर हमारी आत्मा है, परन्तु इस बात का बोध और ज्ञान हमें कब होता है ? जब हम गुरुमुखों के उपदेश पर चलकर अपने अन्तर में ही उस परमात्मा को पहचानने के योग्य बन जाते हैं । उदाहरण के लिये एक बड़ का वृक्ष कितना बड़ा होता है, परन्तु उसका बीज कितना छोटा होता है । यदि कोई हमें समझाने की कोशिश करे कि इतने छोटे-से बीज के अन्दर इतना बड़ा बड़ का पेड़ है, आसानी से किसी की समझ में नहीं आ सकता । जब उस बीज को धरती में बो देते हैं, वह एक छोटा-सा पौधा बन कर निकलता है । धीरे-धीरे परवरिश पाकर वह कितना बड़ा बड़ का वृक्ष हो जाता है । इसी प्रकार महात्मा समझाते हैं कि हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, हम उस सतनाम समुद्र की

बूँदें हैं, पर उस मालिक से बिछुड़ कर इस माया के जाल में फँसे हुए हैं। इस स्थान पर आकर हमारी आत्मा ने मन का साथ ले लिया है। मन आगे इन्द्रियों के भोगों, विषय-विकारों, शराबों-कबाबों, सांसारिक धन्धों का आशिक है। जो-जो कर्म हम मन के अधीन होकर करते हैं, अच्छे भी करते हैं, बुरे भी करते हैं, उन सबका परिणाम भुगतने के लिये हम सभी को बार-बार इस चौरासी के जेलख़ाने में आना पड़ता है।

इस संसार को महात्माओं ने 'कर्म भूमि', 'कर्मां संदड़ा खेत' कह कर याद किया है। हम धरती में जो बीज बोते हैं, उसी फसल को काटने के लिये हमें जाना पड़ता है। यदि कोई मिर्च के बीज डालता है, वह मिर्च की फसल इकट्ठी करने के लिये जाता है, अगर कोई आम का पौधा लगाता है, वह आम के फल खाने का अधिकारी हो जाता है। हम देह में बैठकर अच्छे कर्म करते हैं, अच्छा परिणाम भुगतने के लिये आ जाते हैं, बुरे कर्म करते हैं, बुरा परिणाम भुगतने के लिये आ जाते हैं। यदि हम नेक कर्म करते हैं, क्या परिणाम होता है ? सेठ-साहूकार बन जाते है, राजा-महाराजा बन जाते हैं, जातियों, धर्मों व देशों की हुकूमत प्राप्त करके आ जाते हैं, लोहे की बेड़ियाँ उतर जाती हैं, सोने की बेड़ियाँ पड़ जाती है। 'सी' श्रेणी से बचकर 'ए' श्रेणी प्राप्त कर लेते हैं, झोंपड़ी से बिस्तर उठाकर, महलों में जाकर बिछा लेते हैं, हाथ से झाड़ू निकल जाता है, शासन की बागडोर मिल जाती है। अधिक से अधिक हम बैकुंठों और स्वर्गों तक चले जाते हैं। वे भी भोग-योनियाँ हैं, खास समय या निश्चित समय के लिये हैं। उसके बाद फिर हमें इस चौरासी के जेलखाने में आना पड़ता है। अगर बुरे कर्म करते हैं, फिर तो नरक और चौरासी हमारे लिये तैयार ही रहते हैं। क्या राजा, क्या प्रजा, क्या अमीर, क्या ग़रीब, क्या स्त्री, क्या पुरुष, हम सब संसार के जीव, इस जगह आकर अपने-अपने कर्मों का हिसाब दे रहे हैं। इन कर्मों के कारण जहाँ जाकर हमें जन्म लेना पड़ता है, उसी जामे में बैठकर दुःख ही दुःख, मुसीबतें ही मुसीबतें सहन करनी पड़ती हैं। किसी भी जामे में बैठकर कोई सुख प्राप्त नहीं कर सकता, शान्ति

प्राप्त नहीं कर सकता। मैंने कल भी अर्ज़ की थी कि नीचे के जामों की अवस्था का तो क्या वर्णन किया जाये, आप मनुष्य के जामे के विषय में अच्छी तरह सोच और विचार करके देखें, जिसको हम 'टॉप ऑफ दी क्रिएशन' अर्थात् 'सृष्टि का सिरमौर' कहते हैं। मुसलमान फकीरों ने इसको 'अश्रुफुल मखलूकात' कहकर याद किया है। ऋषि-मुनि इसका 'नर-नारायणी' देहकह कर भी वर्णन करते हैं। इस जामे में बैठकर कोई कौन-सा सुख प्राप्त कर सकता है, कौन-सी शान्ति प्राप्त कर सकता है ? किसी से पूछ कर देख लें, कोई बेचारा बीमारी के हाथों तंग आया बैठा है, कोई बेरोज़गारी के हाथों दुःखी है, किसी की औलाद नहीं है, वह दुःखी है तो किसी को औलाद ने दुःखी किया हुआ है। किसी को कर्ज़ लेना है, किसी को कर्ज़ देना है। सड़कों पर कंगालों की दशा देखें, और जेलों में जाकर अपराधियों की कहानियाँ सुनकर देखे, अस्पतालों में जाकर बीमारों की चीखें सुनें। संसार में दुःख ही दुःख, मुसीबतें ही मुसीबतें दिखाई दे रही हैं। कभी रेडियो सुनकर देख लें, अखबार पढ़कर देख लें, किस प्रकार जातियों, धर्मों, देशों के झगड़े शुरू हैं। कितने ग़रीबों का खून होता है, कितनी स्त्रियाँ विधवा होती हैं, कितने बच्चे अनाथ होते हैं ? जिस नगरी में यह हालत है कि रोटी और कपड़े के लिये भटकते फिरते हैं, उस जामें में बैठकर कोई सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकता है, शांति किस प्रकार प्राप्त कर सकता है ? इसलिये गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'पिर सचे ते सदा सुहागणि ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४) कि यह आत्मा स्त्री है, वह परमात्मा इसका पति है। जब तक यह आत्मा रूपी स्त्री, परमात्मा रूपी पति के चरणों में नहीं जायेगी, यह कभी सुहागिन नहीं होगी, इसका जन्म-मरण के दुखों से कभी भी छुटकारा नहीं हो सकता। इसलिये महात्मा हमारे अन्दर उस मालिक से मिलने का सच्चा इश्क और सच्चा प्यार पैदा करते हैं।

जिस परमात्मा से हम मिलना चाहते हैं, हर महात्मा समझाता है कि वह परमात्मा एक है। यह नहीं कि हिन्दुओं का कोई और है

सिक्खों-ईसाइयों का कोई और है। हिन्दुस्तान के रहने वालों का भी वही है, अमेरिका और अफ्रीका के रहने वालों का भी वही है। महात्मा ने उस परमात्मा को 'इक एका' कहकर याद किया है। मुसलमान फ़क़ीरों ने भी उस परमात्मा को 'रब्बुल आलमीन' कहकर याद किया है, 'रब्बुल मुसलमीन' कहकर याद नहीं किया। अर्थात् रब या परमात्मा, जो सारी रचना का एक है, वह परमात्मा नहीं कि जो केवल मुसलमानों का है। गुरु नानक साहिब समझाते है : 'सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. २) कि जो कुछ संसार में आप आँखों से देख रहे हैं, उस सबका पैदा करने वाला एक परमात्मा है जो सभी का दाता है, सभी का बादशाह है। हमेशा से वही परमात्मा चला आ रहा है और हमेशा उसी परमात्मा को रहना है। सतयुग में भी वही था, त्रेता और द्वापर में भी वही था, अब भी वही है, भविष्य में भी उसी परमात्मा को रहना है। 'जपुजी साहिब' के पहले पद में गुरु नानक साहिब उपदेश करते हैं :

आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १)

गुरु साहिब कहते हैं कि हमारे अनुभव में केवल एक ऐसी वस्तु आई है, जो आदि-युगादि से सत्य चली आ रही है, जो कभी नष्ट नहीं होती, कभी फ़नाह नहीं होती। वह कौन-सी वस्तु है ? वह केवल एक परमात्मा है, अकालपुरुष है, वाहिगुरु है। आप फ़रमाते हैं : 'हरि बिनु सभु किछु मैला संतहु ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ९१०) कि मालिक के बिना सब मैल है, सब झूठ है, सबको नष्ट हो जाना है, सबको फ़नाह हो जाना है।

फिर उस परमात्मा की कोई जाति नहीं, कोई धर्म नहीं, कोई देश नहीं है। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

वरनु जाति चिहनु नही कोई सभु हुकमे सृसटि उपाइदा ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५)

जिस परमात्मा ने अपने हुकम के द्वारा सारी सृष्टि की रचना

की है, न वह काला है, न वह गोरा है, न वह हिन्दू है, न वह सिक्ख है। न वह हिन्दुस्तान का रहने वाला है, न वह अमेरिका का रहने वाला है। आप सोचें, यदि परमात्मा का कोई राष्ट्र या धर्म नहीं है, परमात्मा की कोई जात-पात नहीं है तो आत्मा का कौन-सा राष्ट्र या धर्म हो सकता है, आत्मा की कौन-सी जात-पात हो सकती है ? यदि समुद्र की कोई जाति या धर्म नहीं है तो साधारण बूँद की कौन-सी जाति या धर्म हो सकेगा ? यदि सूर्य की कोई जात-पात नहीं है, साधारण प्रकाश की क्या जात-पात हो सकेगी ? परमात्मा ने मनुष्य पैदा किया है, हम अपने आप को छोटी-छोटी जातियों, समुदायों, धर्मों और देशों में बांट कर बैठे हुए हैं और एक-दूसरे के भेद-भाव में फँसे हुए हैं, यद्यपि हरएक महात्मा की शिक्षा हमारे ख़याल को जात-पात के झगड़ों से बहुत ऊँचा ले जाने की कोशिश करती है। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

जिथै लेखा मंगीऐ तिथै देह जाति न जाइ ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. १३४६)

कि जिस स्थान पर हमारे कर्मों का हिसाब-किताब होता है, उस स्थान पर न तो हमारा शरीर पहुँचता है, न वहाँ कोई हमारी जात-पात पूछता है। कोई यह सवाल नहीं करेगा कि तुम हिन्दू होते थे या सिक्ख या ईसाई होते थे, तुम हिन्दुस्तान से आये हो या अमेरिका और अफ्रीका से आये हो। वहाँ हमारे कर्म देखे जाते हैं, हमारा भक्ति-भाव देखा जाता है, हमारा प्रेम और प्यार देखा जाता है। ये जात-पात तो यहीं रह जायेंगी। किसी की जातियाँ अग्नि के सुपुर्द हो जायेंगी, किसी के राष्ट्र और धर्म मिट्टी में ही मिले रह जायेंगे। कबीर साहिब कहते हैं :

जात-पात पूछे न कोय। हरि को भजे सो हरि का होय ॥

जात-पात आपकी किसी ने नहीं पूछनी, जो परमात्मा की भक्ति करता है, वह परमात्मा का रूप हो जाता है। आप हिन्दू होकर परमात्मा की भक्ति करें, सिक्ख, ईसाई होकर परमात्मा की भक्ति करें। भक्ति, इश्क और प्रेम वापस जाकर परमात्मा से मिलाते हैं।

कहीं किसी के दिल में यह ख़याल न हो कि मैं हिन्दुओं से सिक्ख बन जाऊँ, तो ही परमात्मा को मिल सकूँगा या मेरा ईसाई बनना या मुसलमान बनना परमात्मा से मिलने के लिये बड़ा ज़रूरी है । बुल्लेशाह मुसलमानों में बड़े ला-धड़क महात्मा हुए हैं । आप फ़रमाते हैं :

अमलां उत्ते होण निबेड़े, खड़ीआं रहिणगीआं जातां ।।

कि जो अपने अमलों की ओर ध्यान देते हैं, अपने कर्मों की ओर ध्यान देते हैं, उनका ही हिसाब-किताब समाप्त होता है । जो जात-पात के चक्कर में फँसे हुए हैं, उनको दरगाह में कोई नहीं पूछता । पल्टू साहिब उत्तरप्रदेश में बड़े प्रसिद्ध और निडर महात्मा हुए हैं । अपनी वाणी में ज़िक्र करते हैं :

पलटू ऊँची जात कौ जनि कोउ करै हंकार ।
साहिब के दरबार में केवल भक्ति पिआर ।।

शायद किसी के मन में ख़याल हो कि मैं ब्राह्मणों के घर में पैदा हो गया हूँ, मुझे ही परमात्मा से मिलने का गौरव प्राप्त हो सकता है, या मैं किसी अन्य जाति में जन्म ले चुका हूँ, शायद कभी भी परमात्मा की भक्ति न कर सकूं । पलटू साहिब कहते हैं कि यह विचार ही सदा के लिये अपने मन से निकाल दो । उस परमात्मा के घर पहुँचने के लिये केवल भक्ति की आवश्यकता है, प्यार की आवश्यकता है । यदि हमारे अन्दर मालिक से मिलने का इश्क नहीं है, प्रेम और प्यार नहीं है, तो जितनी चाहें कोशिश करते रहें, जितनी चाहें जातियाँ बदलते रहें, धर्म बदलते रहें, कभी भी परमात्मा से मिलने के अधिकारी नहीं हो सकते । गुरु साहिब तो यहाँ तक अपनी वाणी में जात-पात का खण्डन करते हैं : 'बिनु नावै सभ नीच जाति है बिसटा का कीड़ा होइ ।। (आदि ग्रन्थ, पृ. ४२६) कि जो नाम की कमाई नहीं करते, उनसे अधिक नीच जाति वाला और कौन होगा, जिन्हें मौत के बाद जाकर विष्टा अर्थात् गंदगी के कीड़े बनना है । फिर समझाते हैं : जिन नाम रिदै सो ऊचो ऊचा सचे आपि समावणिआ ।। कि जिनके मन में नाम बस जाता है, जो उठते-बैठते, शब्द और नाम की कमाई में लग जाते हैं, वे ऊँचे से

ऊँचे हैं, पवित्र से पवित्र हैं क्योंकि वे वापस जाकर सच्चे परमात्मा में समा जाते हैं। इसलिये महात्मा प्यार से समझाते हैं कि आप जात-पात के भिन्न-भेद में न फँसे, अपने अन्दर मालिक से मिलने का इश्क पैदा करें, मालिक से मिलने का प्यार पैदा करें।

जब हमारा ध्यान परमात्मा की ओर जाता है तो हम सब अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार हज़ारों युक्तियों और साधनों के द्वारा परमात्मा को ढूँढने की कोशिश करते हैं। जप-तप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, पुण्य-दान करते हैं, घर-बार छोड़ कर जंगलों-पहाड़ों में बैठ जाते हैं, कान फड़वाते हैं, शरीर पर भभूति लगाते हैं, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र भी पढ़ते हैं, महात्माओं के सत्संग भी सुनते हैं, मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों में भी जाते हैं, सरोवरों में स्नान भी करते हैं, जटायें भी रखते हैं। ये सभी साधन, सारे तरीके, हम केवल एक परमात्मा से मिलने के लिये करते हैं। लेकिन यहाँ गुरु साहिब कहते हैं कि कोशिश तो सब दुनिया के जीव उस मालिक से मिलने की करते हैं, पर सफल उसी समय हो सकते हैं, जिस समय स्वयं परमात्मा हम पर दया, मेहर व बख़्शिश करके हमें अपने साथ मिला लेता है। हम संसार के जीव अन्धे हैं, वह परमात्मा आँखों वाला है। जब तक आँखों वाला अन्धे को अपने पास नहीं बुलाता या उसकी अंगुली पकड़कर अंधेरे से बाहर नहीं निकालता, अन्धे की क्या ताकत है कि अँधेरे से बाहर आ सके या आँखों वाले को पकड़ सके ? हम इस मोह-माया के जाल में फँस कर, पुत्र-पुत्रियों के प्यार में फँस कर, कौमों, मज़हबों, मुल्कों के झगड़ों में फँसकर बिलकुल अन्धे हो चुके हैं, बहरे हो चुके हैं। परमात्मा ही हम पर दया-मेहर करे तो ही हमारा ख़याल मालिक की भक्ति की ओर जा सकता है। गुरु साहिब कहते हैं : 'हरि साचे भावै सा पूजा होवै ।। (आदि ग्रन्थ, पृ. ९१०) कि उस परमात्मा को भाएगा, मंज़ूर होगा तब ही हम परमात्मा की पूजा कर सकेंगे। फिर कहते हैं, 'जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ।। जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ११०) कि हे परमेश्वर, सबका जन्म-मरण तेरे अपने हाथ में है। जिन-जिन पर

तेरी दया, मेहर व बख़्शिश हो जाती है, उनको ही तुझसे मिलने का गौरव मिलता है। कबीर साहिब कहते हैं :

साहिब से सब होत है, बंदे से कछु नाहीं।
राई से परबत करे, परबत राई माहीं ।।

जो कुछ भी होना है, मालिक की दया, मेहर व बख़्शिश से होना है, जीव के अपने वश में कुछ भी नहीं है। उस मालिक को मंज़ूर होगा तो वह राई से पर्वत बना लेगा, अर्थात् आत्मा से परमात्मा बना लेगा। फिर पता लगेगा कि वह परमात्मा भी कहीं बाहर नहीं है, वह भी राई अर्थात् हमारी आत्मा के अन्दर बैठा हुआ है। इसलिये महात्मा कहते हैं कि हम मालिक की दया-मेहर से ही मालिक की भक्ति कर सकते हैं।

अब मन में विचार आता है कि परमात्मा तो सचखण्ड में बैठा हुआ है, हम माया के जाल में उलझे बैठे हैं वह परमात्मा हम पर दया-मेहर किस प्रकार करता है ? यहाँ गुरु अमरदास जी कहते हैं : 'करमु होवै सतिगुरू मिलाए ।।' कि जब परमात्मा हम पर कृपा करेगा, दया करेगा, हमें गुरुमुखों की संगति मिल जायेगी, साधू संतों, महात्माओं की संगति प्राप्त हो जायेगी। हमारा मन संगति का बड़ी जल्दी असर लेता है। दस दिन चोरों की संगति करें, चोरी करने की आदत पड़ जायेगी, जुआ खेलने वालों के पास बैठें, जुआ खेलने की आदत पड़ जायेगी। जब मालिक के भक्तों और प्यारों की संगति और साथ करते हैं तो उनको देखकर हमारे अन्दर भी मालिक से मिलने का शौक और प्यार अपने आप पैदा हो जाता है। गुरु साहिब कहते हैं :

साकत सूतु बहु गुरझी भरिआ, किउ करि तानु तनीजै ।।
तंतु सूतु किछु निकसै नाही, साकत संगु न कीजै ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ. १३२४)

कि उलझे हुए सूत से कभी कपड़ा नहीं बुना जा सकेगा ? इसी प्रकार मनमुखों की संगति में रह कर कभी किसी का मन ख़याल को मालिक की भक्ति की ओर नहीं जाने देगा। किस की संगति करनी

है : 'गोबिंद जीउ सतसंगति मेलि हरि धिआईऐ ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ११७९) कि हे परमेश्वर, अपने साधु, संतों व महात्माओं की संगति दे, सत्संग दे, ताकि तेरा पता लगे, तेरी भक्ति की ओर हमारा ख़याल जाये। महात्मा सदा सत्संग के द्वारा हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक पैदा करते हैं, सत्संग के द्वारा ही हमारे ख़याल को वहमों, भ्रमों व संकल्पों से निकालते हैं। कबीर साहिब कहते हैं :

कबीर संगत साध की, जौ की भूसी खाय।
खीर खांड भोजन मिलै, साकत संग न जाय ।।

कि यदि हमें मनमुखों की संगति में जाकर खीर, हलवा और अच्छे भोजन भी मिलते हैं, उनसे गुरुमुखों की संगति में जाकर सूखे टुकड़े खाना कहीं अच्छा है। आप कहते हैं :

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से पुन आध।
कबीर संगत साध की, कटै कोटि अपराध ।।

कि एक घड़ी, आधी से आधी घड़ी भी जो मालिक के भक्तों की संगति करते हैं और उनके उपदेश के अनुसार मालिक की भक्ति और पूजा करते हैं, वह हमारी मन-बुद्धि की सौ वर्ष की भक्ति से भी अच्छी है। यदि मार्ग पूर्व की ओर है, दौड़ते पश्चिम की ओर हैं जितना दौड़ते हैं, मंज़िले-मक्सूद, अपने लक्ष्य से दूर होते चले जाते हैं। पर जब सच्चे गुरुमुखों की संगति करते हैं तो हमारे मन से हज़ारों प्रकार के सन्देह व संकल्प दूर हो जाते हैं, मन को ठोकर लगती है और परमात्मा की सच्ची भक्ति का पता लगता है। इसी लिये महात्मा गुरुमुखों की संगति करने का उपदेश देते हैं।

परन्तु महात्मा सत्संग उसको नहीं कहते जहाँ एक जाति दूसरी जाति को गालियाँ देती है, जहाँ एक धर्म दूसरे धर्म की गर्दन काटने की योजनाएँ बनाता है। न महात्मा के सत्संग में मरे हुए राजा-महाराजाओं की कथा-कहानियां सुनाई जाती हैं। गुरु साहिब कहते हैं : 'सतसंगति कैसी जाणीऐ ।। जिथै एको नामु वखाणीऐ ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ७२) कि सत्संग वह स्थान है जहाँ केवल शब्द या नाम का प्रचार

किया जाता है। यदि कोई हमारे कहने के अनुसार मालिक की भक्ति नहीं करता तो उसका यह मतलब नहीं कि हम डण्डे लेकर उसको डराना शुरू कर दें, उसके साथ गाली-गलौच करना शुरू कर दें। हमें उसे प्यार से समझाना चाहिये कि इस मार्ग पर चलकर हमें यह लाभ हुआ है, यदि तेरी अक्ल में आता है तो तू भी इस मार्ग पर चल-कर यह लाभ प्राप्त कर सकता है।

जब गुरुमुखों की संगति और साथ करते हैं, 'सेवा सुरति सबदि चितु लाए' वे हमारी सुरत को शब्द से जोड़ देते हैं। जब हम सुरत-शब्द का अभ्यास करते हैं, नाम की कमाई करते हैं, हमारा संसार से मोह निकल जाता है, परमात्मा के साथ मोह और प्यार पैदा हो जाता है। सुरत-शब्द के अभ्यास का मतलब ही अपनी सुरत को नौ द्वारों से निकाल कर आँखों के पीछे लाकर अन्दर शब्द से जोड़ना है।

हमारे शरीर के अन्दर जो आत्मा और मन का स्थान है, जिसको कोई 'शिव-नेत्र' कहता है, कोई 'दिव्य चक्षु' कहता है, कोई 'मुक्ति का दरवाज़ा' कहता है, वह स्थान हरएक की आँखों के पीछे है। गुरु रामदास जी कहते हैं : 'मनु खिनु खिनु भरमि भरमि बहु धावै तिलु घरि नही वासा पाईऐ ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ११७९) कि हमारा मन आँखों के पीछे शिवनेत्र या तीसरे तिल से उतर कर मिनिट-मिनिट, सेकिण्ड-सेकिण्ड बाहर के भ्रमों की ओर दौड़ता है। यह क्षण-मात्र के लिये भी आँखों के पीछे नहीं टिकता। जब तक मन आँखों के पीछे नहीं टिकता, यह वापस ब्रह्म, त्रिकुटी अपने ठिकाने पर नहीं पहुँच सकता। जब तक मन नौ द्वारों से सिमट कर वापस अपने ठिकाने पर नहीं पहुँचता, आत्मा इसके पंजे से आज़ाद नहीं हो सकती, आत्मा और मन की गाँठ नहीं खुल सकती, हम अपने आप को पहचानने के योग्य नहीं बन सकते, वापस जाकर उस परमात्मा को पहचानने के योग्य नहीं बन सकते। नौ द्वार क्या हैं? दो आँखें हैं, दो कानों के सुराख हैं, नाक के सुराख हैं, मुख है, नीचे दो इन्द्रियों के सुराख हैं। इन नौ द्वारों के द्वारा हमारा मन सारे संसार में फैल जाता है। यहाँ बैठे हुए किसी

को बाल-बच्चों का ख़याल आता है, किसी को घर के कारोबार का ख़याल आता है, कोई दुकान के ग्राहकों के बारे में सोचता है। किसी का मन निश्चल नहीं बैठता, किसी न किसी की सोच और विचार में लगा ही रहता है।

यह जो सारा दिन मन को सोच और विचार करने की आदत पड़ी हुई है, इसी को महात्मा सुमिरन करना कहते हैं। सुमिरन करने की तो सब को कुदरती आदत पड़ चुकी है। आप कितनी अँधेरी कोठरियों में अपने आप को क्यों न बन्द कर लें, आप उस स्थान पर नहीं होंगे, आपका मन सारे संसार में डोल रहा होगा। फिर जिसका हम सुमिरन करते हैं, उसकी शक्ल भी आँखों के आगे आकर खड़ी हो जाती है। यदि पुत्र-पुत्रियों का सुमिरन करते हैं, पुत्र-पुत्रियाँ आँखों के आगे आ जायेंगे। यदि घर के कारोबार का सुमिरन करते हैं, घर के कारोबार आँखों के आगे आ जायेंगे। इसको महात्मा 'ध्यान धरना' कहते हैं। जिसका भी हम सुमिरन करते हैं, उसी का हम ध्यान धरना शुरू कर देते हैं और जिनका सुमिरन करते हैं, ध्यान धरते हैं, उनसे हमारा मोह हो जाता है, प्यार पैदा हो जाता है। इतना उन शक्लों और पदार्थों के साथ अपना मोह और प्यार पैदा हो जाता है कि रात को हमें सपने भी उनके ही आते हैं और मौत के समय उनकी शक्लें सिनेमा के पर्दे के समान आँखों के आगे आकर खड़ी हो जाती हैं। 'जहां आसा तहां बासा'। जहाँ हमारा अन्तिम समय ख़याल होता है, हम संसार के जीव उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं।

कौन-सी वस्तु हमें बार-बार देह के बन्धनों में ले आई? संसार का मोह और प्यार लाया। यह किसने पैदा किया? सुमिरन और ध्यान ने पैदा किया। किसके सुमिरन और ध्यान ने? उन वस्तुओं के सुमिरन और ध्यान ने जिन्हें नष्ट हो जाना है। सोचकर देखें, ये जो कुछ भी हम संसार में देखते हैं, इन सबने नष्ट हो जाना है, फ़नाह हो जाना है। महात्मा कहते हैं कि सुमिरन और ध्यान की हरएक को कुदरती आदत पड़ चुकी है। इसलिये मन की सुमिरन करने की आदत से हमें

फायदा उठाना चाहिये । सुमिरन को सुमिरन काटेगा, ध्यान को ध्यान काटेगा । परन्तु आप उस का सुमिरन करें, ध्यान करें, जिसे कभी नष्ट नहीं होना है, फनाह नहीं होना है । वह कौन है ? केवल एक परमात्मा है, जिसके हज़ार व अनेक नाम हमने अपने-अपने प्यार में आकर रखे हैं । इसलिये महात्मा हमें उस परमात्मा का नाम जपने का, परमात्मा के नाम का सुमिरन करने का तरीका बताते हैं । हमें गुरुमुखों द्वारा बताई गई रीति से सुमिरन के द्वारा अपने फैले हुए ख़याल को वापस लाकर आँखों के पीछे इकट्ठा करना है ।

जिस समय आँखों के पीछे ख़याल इकट्ठा करते हैं, हमारा ख़याल वहां टिकता नहीं, बार-बार नीचे की ओर गिरता है । जब तक हम इसको किसी के स्वरूप का ध्यान नहीं देते, हमारे ख़याल को यहाँ ठहरने की आदत नहीं पड़ सकती । हमें किसके स्वरूप का ध्यान देना है ? परन्तु मालिक तथा उसके स्वरूप का तो किसी को पता नहीं क्योंकि मालिक की शक्ल तो किसी ने देखी नहीं । फिर कौन-सी वस्तु हमारे ध्यान करने के योग्य हो सकती है ? जिसका भी हम ध्यान धरेंगे, उसी से हमारा मोह पैदा हो जायेगा, प्यार पैदा हो जायेगा और जहाँ वह जायेगा उसके मोह के बँधे हुए, हमें भी उस स्थान पर जाकर जन्म लेना पड़ेगा । इसलिये हमें सम्पूर्ण सृष्टि को आँखों के आगे रखकर सोचना है कि संसार में कौन-सी वस्तु हमारे ध्यान धरने के योग्य हो सकती है ?

हम देखते हैं कि संसार की सभी वस्तुएँ पाँच तत्वों की बनी हुई हैं—पृथ्वी है, पानी है, अग्नि है, हवा है, आकाश है । प्रत्येक वस्तु के अन्दर कोई न कोई तत्व मौजूद है । हमारे अन्दर पांच तत्व हैं, इसलिये महात्मा हमें 'पाँच तत्व का पुतला' कह कर याद करते हैं, 'टाप ऑफ दी क्रिएशन' या 'सृष्टि का सिरताज' कहते हैं । जीवों की पहली वह श्रेणी है जिसके अन्दर पानी का तत्व है । ये जितनी भी सब्ज़ियां, पेड़, घास-फूस हैं, इनमें पानी का तत्व प्रधान है । यदि हम पाँच तत्वों वाले होकर, इन पेड़-पौधों का ध्यान करेंगे, क्या परिणाम होगा ? 'जहां आसा तहां बासा' हम भी इनके जामों में आ जायेंगे । इसलिए वनस्पति

संसार में से कोई भी वस्तु हमारे ध्यान करने के योग्य नहीं हो सकती ? दूसरी श्रेणी में धरती के बिच्छू, कीड़े-मकौड़े आदि हैं, जिनमें पृथ्वी और अग्नि के तत्व प्रधान होते हैं । ये भी हमारे ध्यान धरने के योग्य नहीं हैं । तीसरी श्रेणी पक्षियों की है । यदि हम पाँच तत्वों के पुतले होकर गरुड़, चिड़ियों या कबूतरों का ध्यान करेंगे, क्या परिणाम होगा ? गरुड़ बन जायेंगे, कबूतर बन जायेंगे, चिड़ियाँ बन जायेंगे । हम तो मनुष्य के जामे से ऊपर जाने का प्रयत्न कर रहे थे, इन पक्षियों का ध्यान धर कर हम अपने ख़याल को और नीचे ले आते हैं । चौथी श्रेणी चौपायों, जानवरों की है, जिनमें आकाश का तत्व नहीं होता, बाकी सारे तत्व होते हैं । इसलिये गाय, भैंस, घोड़े इत्यादि भी हमारे ध्यान धरने के योग्य नहीं हो सकते । पाँचवीं श्रेणी स्वयं मनुष्य की है । वे पांचों तत्व हम सबके अन्दर हैं । इसलिये मनुष्य मनुष्य का ध्यान करे तो क्यों करे, खास कर आजकल के ज़माने में, जब हम सबके एक जैसे अधिकार हैं ? अब मनुष्य, मनुष्य का ध्यान नहीं धरता, गाय-भैंस की बोली समझ में नहीं आती, देवी-देवता कभी किसी ने देखे नहीं, परमात्मा के स्वरूप का किसी को पता नहीं । हम यहाँ आकर बड़े सोच में डूब जाते हैं कि आखिर इस संसार में कौन-सी वस्तु हमारे ध्यान करने के योग्य हो सकती है ?

हुज़ूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी) समझाया करते थे कि यदि किसी कमरे में बहुत से रेडियो रखे हों, जिनका सम्पर्क बिजली या बैटरी से न हो तो आप कभी किसी देश के समाचार नहीं सुन सकते । यदि उनका सम्पर्क बिजली या बैटरी से कर दें, जिस देश के चाहें समाचार सुन सकते हैं । हम उन गुरुमुखों के, मालिक के भक्तों और प्यारों के स्वरूप का ध्यान करते हैं, जिनकी लिव, जिनका ध्यान मालिक से लगा हुआ है । वे अपने प्यार और भक्ति के बँधे हुए वापस जाकर परमात्मा में समा जायेंगे, हम भी उनके प्यार के बँधे हुए, उस परमात्मा में जाकर समा जाते हैं ।

स्वामीजी महाराज कहते हैं : 'गुरु का ध्यान कर प्यारे । बिना

इसके नहीं छुटना ॥' (सार बचन, १४३)। यही गुरु अर्जुनदेव जी कहते हैं : 'गुर की मूरति मन महि धिआनु ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ८६४) कि गुरुमुखों के ध्यान को अपने मन में रखना है, गुरुमुखों के स्वरूप का ध्यान करना है। मुसलमान फ़कीर भी यही समझाते हैं कि ज़िक्र (सुमिरन) के द्वारा अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करो, तसव्वुर (ध्यान) के द्वारा अपने ख़याल को आँखों के पीछे ठहराओ। ज़िक्र से भाव सुमिरन करना है, तसव्वुर से भाव ध्यान धरना है। पूरे गुरुमुखों का, मालिक के भक्तों व प्यारों का जो वास्तविक स्वरूप होता है, वह शब्द होता है, नाम होता है। मनुष्य का शिक्षक मनुष्य ही हो सकता है। जब तक कोई हमारे जैसा होकर हमें न समझाये, हमें कभी किसी चीज़ की समझ नहीं आ सकती। वे मालिक के भक्त और प्यारे शब्द और नाम में से ही आते हैं, संसार में आकर शब्द और नाम का ही प्रचार करते हैं और वापस जाकर शब्द और नाम में ही समा जाते हैं। गुरु अर्जुन साहिब बड़े सुन्दर ढंग से समझाते हैं :

खंड पताल दीप सभि लोआ ॥
सभि कालै वसि आपि प्रभि कीआ ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ० १०७६)

कि यह जो कुछ भी आप संसार या रचना आँखों से देख रहे हैं, परमात्मा ने खुद इसकी रचना की है और इसका प्रबन्ध काल के सुपुर्द कर दिया है। काल की सीमा ब्रह्म तक है, त्रिलोकी तक है। जो-जो काल के दायरे के अन्दर हैं, सब जन्म-मरण के दुःखों में फँसे हुए हैं। परन्तु गुरु अर्जुन साहिब समझाते हैं : 'निहचलु एकु आपि अबिनासी सो निहचलु जो तिसहि धिआइदा ॥' (आदि ग्रन्थ, १०७६)। दुनिया की रचना करने वाला तथा इस रचना को काल के सुपुर्द करने वाला वह परमात्मा स्वयं निश्चल है, वह कभी जन्म-मरण के दुःखों में नहीं आता। जो उस निश्चल परमात्मा का ध्यान धरते हैं, उस परमात्मा से प्यार करते हैं, वे भी निश्चल हो जाते हैं, उनका भी जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा हो जाता है।

पर मालिक तो कभी किसी ने देखा नहीं, इसलिये मालिक के स्वरूप

का ध्यान किस प्रकार करें ? गुरु अर्जुनदेव जी कहते हैं : 'हरि का सेवकु सो हरि जेहा ।। भेदु न जाणहु माणस देहा ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ० १०७६) कि जो मालिक के भक्त प्यारे हैं, वे मालिक की भक्ति करके मालिक का रूप हो जाते हैं । उनके और परमात्मा में कोई भी भिन्न-भेद नहीं होता । उनका परमात्मा से क्या सम्बन्ध है ? 'जिउ जल तरंग उठहि बहु भाती फिरि सललै सलल समाइदा ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ० १०७६) समुद्र के अन्दर दो चार मिनिट के लिये एक लहर उठती है, फिर वह लहर वापस जाकर समुद्र में ही समा जाती है । जो एक लहर का समुद्र से सम्बन्ध है, वही मालिक के भक्तों और प्यारों का परमात्मा से सम्बन्ध होता है । सन्त-महात्मा सतनाम समुद्र की लहरें होते हैं । वे संसार में आकर शब्द और नाम का सन्देश देते हैं, शब्द और नाम का प्रचार करते हैं और वापस जाकर शब्द और नाम में ही समा जाते हैं । हज़रत ईसा ने बाईबिल में समझाया है, "तुमने मुझे देखा है, मैंने अपने पिता को देखा है । इसलिये मेरे द्वारा तुमने भी अपने पिता या परमात्मा को देखा है । तुम मेरे अन्दर समाये हुए हो, मैं उसके अन्दर समाया हुआ हूँ, सो मेरे द्वारा तुम भी उस परमात्मा में समाये हुए हो ।"

जो हमारा वास्तविक गुरु होता है, वह शब्द होता है, नाम होता है । गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'सबदु गुरू सुरति धुनि चेला ।।' (आदि ग्रन्थ, ९४३) । जो सुरत है, यह सेवक है, जो शब्द है, वह हम सबका गुरु है । यह शरीर तो सेवक को भी यहीं छोड़ जाना है, गुरुमुखों को भी यहीं छोड़ जाना है । न तो गुरुमुखों का शरीर कभी सचखण्ड पहुँचता है, न ही सेवकों का शरीर कभी सचखण्ड पहुँचता है । परन्तु जो सेवक शरीर में बैठकर गुरुमुख के द्वारा अपनी आत्मा को अन्दर शब्द से जोड़ लेता है, वह शब्द कभी उस आत्मा को नहीं छोड़ता, सीधा जाकर उस आत्मा को परमात्मा के अन्दर समा देता है । इसीलिये महात्मा समझाते हैं कि शब्द-स्वरूपी, शब्द-अभ्यासी गुरुमुख की खोज करनी चाहिये । हज़रत ईसा ने भी कहा है कि 'वर्डमेड

फ्लेश' कि देहधारी शब्द की खोज करो, अर्थात् उस मनुष्य की खोज करो, जिसमें शब्द और नाम अपना घर कर चुका है। पलटू साहिब कहते हैं : 'धुन आनै जो गगन की सो मेरा गुरदेव।' हम सबके अन्दर आँखों के पीछे वह शब्द और नाम धुनकारें दे रहा है। जो हमारे ख़याल को उस शब्द से जोड़ता है, नाम से जोड़ता है, वही हमारा असली मार्गदर्शक है, वही हमारा असली गुरु है। हम उसके द्वारा ही अपनी आत्मा को उस परमात्मा तक ले जा सकते हैं। हम गुरुमुखों के स्वरूप का ध्यान धरते हैं क्योंकि वे भक्ति और प्यार में बँधे हुए वापस जाकर परमात्मा में समा जायेंगे, हम भी उनके प्यार में बधे हुए वापस जाकर उसी शब्द, नाम या परमात्मा में समा जाते हैं। सो ख़याल को सुमिरन के द्वारा आँखों के पीछे इकट्ठा करना है, ध्यान के द्वारा ख़याल को आँखों के पीछे ठहराना है। जब ख़याल आँखों के पीछे ठहर जाता है तो फिर हमें अपने-आप अन्दर सत्य की, सच्चे शब्द की जानकारी और समझ आ जाती है। गुरु अमरदास जी कहते हैं :

नउ दर ठाके धावतु रहाए ॥ दसवै निजघरि वासा पाए ॥
ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती गुरमती सबदु सुणावणिआ ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ० १२४)

आप समझाते हैं कि जब आप नौ द्वारों में से ख़याल को निकाल कर आँखों के पीछे इकट्ठा करेंगे, आप अपने घर के दरवाज़े पर पहुँच जायेंगे। उस घर के दरवाज़े की क्या निशानी है ? उस केन्द्र पर सबके अन्दर अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है। शब्द की मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़, जो कि मालिक की दरगाह से आ रही है, वह चोरों में भी है, ठगों में भी है, साधू, सन्तों और महात्माओं में भी है। वहाँ किसी जाति, धर्म, देश का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता। कोई हिन्दू होकर अन्दर जाये, सिक्ख, ईसाई होकर अन्दर जाये, जो भी भाग्यशाली अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करता है, वह अपने अन्दर शब्द की आवाज़ को सुनना शुरू कर देता है, शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देता है।

यह जो हमारी आत्मा है, इसकी देखने की शक्ति को महात्मा 'निरत' कहते हैं, सुनने की शक्ति को 'सुरत' कहते हैं। सुरत अन्दर शब्द को सुनती है, निरत अन्दर शब्द के प्रकाश को देखती है। उदाहरण के लिये, यदि हम अपनी बस्ती से शाम को नदी के किनारे सैर करते हुए कहीं दूर निकल जायें, रात हो जाये, अँधेरा हो जाये, पता न चले कि हम अपनी बस्ती किस ओर छोड़ आये हैं। हम क्या करेंगे ? अँधेरे में खड़े होकर बड़े ध्यान से सुनेंगे कि बस्ती की ओर से कोई आवाज़ आती हो, किसी के टेप-रेकार्डर, रेडियो या घण्टी वगैरह की आवाज़ आती हो। उस आवाज़ को सुनकर हम अपनी बस्ती की दिशा निश्चित कर लेते हैं कि हमारी बस्ती सामने की ओर है या पीछे की ओर है, दाईं ओर है या बाईं ओर है। इस प्रकार हमें दिशा का तो पता चल जाता है, परन्तु मार्ग में अँधेरा है, ऊँची-नीची ज़मीन है, पानी है, झाड़ियाँ आदि हैं। यदि हमारे पास कोई टार्च या बैटरी हो तो उससे मार्ग देखते-देखते सीधे अपनी बस्ती वापस आ जाते हैं। इसी प्रकार हम परमात्मा के घर से भूले हुए हैं, परमेश्वर ने हम सबके अन्दर आँखों के पीछे आवाज़ भी रखी हुई है, प्रकाश भी रखा हुआ है। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

अंतरि जोति निरंतरि बाणी साचे साहिब सिउ लिव लाई ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ. ६३४)

कि हरएक की आँखों के पीछे ज्योति जग रही है। उस ज्योति के अन्दर मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़ पैदा हो रही है। जो भाग्यशाली, खुशकिस्मत जीव आँखों के पीछे ख़याल इकट्ठा करते हैं, वे उस ज्योति के दर्शन करते हैं, उस वाणी के अन्दर से निकल रही आवाज़ को पकड़ते हैं। उनको इसका क्या फ़ायदा होता है ? 'साचे साहिब सिउ लिव लाई ।।' उनका संसार से मोह निकल जाता है, उनका परमात्मा से प्रेम और प्यार पैदा हो जाता है। कबीर साहिब कहते हैं : 'दीवा बले अगम का बिन बाती बिन तेल।' कि वह अगम की ज्योति हरएक की आँखों के पीछे जल रही है, जिसको न कभी बत्ती

की आवश्यकता होती है, न कभी तेल की ज़रूरत पड़ती है। आप अच्छी तरह विचार करके देखें कि बाहर हम जितनी भी ज्योति जलाते हैं, हरएक को बत्ती की ज़रूरत पड़ती है, तेल की ज़रूरत पड़ती है। किसी की बत्ती समाप्त हो जाये, ज्योति बुझ जाती है, तेल समाप्त हो जाये, ज्योति बुझ जाती है। तेज़ हवा चल पड़े, ज्योति बुझ जाती है। परन्तु कबीर साहिब कहते हैं कि जिस ज्योति के दर्शन करके हमें अन्दर रूहानी सफ़र तय करना है या मन को निर्मल करना है, उस ज्योति को आज तक न कभी बत्ती की ज़रूरत पड़ी है, न कभी तेल की ज़रूरत पड़ी है। वह ज्योति रात-दिन, चौबीस घण्टे सबके अन्दर आँखों के पीछे जल रही है। स्वामीजी महाराज कहते हैं :

बसो तुम आय नैनन में । सिमट कर एक यहँ होना ।।
दुई यहँ दूर हो जावे। दृष्टि जोत में धरना ।।

(सार बचन, पृ. १५२)

कि जब तक हमारा ख़याल आँखों के पीछे से उतर कर बाहर की ओर फैला हुआ है, हम द्वैत के अन्दर फँसे हुए हैं। जब सुमिरन और ध्यान के द्वारा ध्यान को आँखों के पीछे इकट्ठा करेंगे, हम द्वैत से निकल कर एकता में आ जायेंगे। वहाँ पहुँच कर हमें ज्योति जलती दिखाई देगी, जिस ज्योति के हरएक को अन्दर दर्शन करने हैं। यही हज़रत ईसा ने बाईबिल में कहा है, "यदि तेरी आँख एक हो जाये तो तेरा सम्पूर्ण शरीर प्रकाश से परिपूर्ण हो जायेगा।" यदि आप एक आँख वाले बन जायेंगे अर्थात् नौ द्वारों से ख़याल को समेट कर आँखों के पीछे इकट्ठा कर लेंगे तो आपको अपने अन्दर नूर ही नूर, प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देना शुरू हो जायेगा। यही पलटू साहिब समझाते हैं :

उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग ।
तिस में जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती ।
छह रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती ।

आप सिर के ऊपर के भाग को उलटा कुआं कहकर याद करते हैं। कुएं का तल नीचे की ओर होता है, हमारे सिर का तल ऊपर की

ओर है। आप कहते हैं कि जब भी आप नौ द्वारों से ख़याल निकालेंगे, आप उलटे कुएँ में आ जायेंगे। वहाँ आप सबको चिराग जलता दिखाई देता है, ज्योति जलती नज़र आती है। उस ज्योति को आज तक न कभी बत्ती की ज़रूरत पड़ी है, न कभी तेल की जरूरत पड़ी है। वह ज्योति रात-दिन, चौबीस घण्टे सबके अन्दर जल रही है। गुरु साहिब कहते हैं: 'राम नामु है जोति सबाई ततु गुरमति काढि लईजै ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. १३२३)। वह जो राम नाम की ज्योति है, वह चोरों में भी है, ठगों में भी है, साधू, सन्तों, महात्माओं में भी है। इसलिये हमें उस शब्द की आवाज को अन्तर में पकड़ना है, उस शब्द के प्रकाश को अन्तर में देखना है। फिर मंज़िल-दर-मंज़िल अन्दर रूहानी यात्रा तय करनी शुरू कर देनी है। इस अन्तर्मुख साधना को महात्मा सुरत-शब्द का अभ्यास भी कहते हैं।

महात्मा समझाते हैं कि शब्द दो प्रकार का है: एक वर्णात्मक शब्द है, दूसरा धुनात्मक शब्द है। हमारे अनेक धर्म हैं, अनेक देश हैं, हमारी अनेक भाषाएँ हैं। एक-एक भाषा में हम अनेक शब्दों से परमात्मा को याद करते हैं। परमात्मा की महिमा के आधार पर ये जितने भी हमने परमात्मा के नाम रखे हैं—'हरिओम', 'परमात्मा', 'अल्लाह', 'रब', 'वाहिगुरु', 'राधास्वामी'—ये सभी वर्णात्मक शब्द हैं क्योंकि ये अपने बोलने में आ जाते हैं, लिखने में आ जाते हैं, पढ़ने में आ जाते हैं। हज़ारों और अनेक महात्मा संसार में आये हैं, हज़ारों और अनेक शब्दों के द्वारा उन्होंने परमात्मा को याद किया है। अभी हज़ारों और अनेक महात्माओं को आना है और अनेक शब्दों के द्वारा परमात्मा को याद करना है। हम परमात्मा के पिछले रखे हुए नाम भूलते जा रहे हैं, आगे परमात्मा के अपने प्यार में नये नाम रखते चले जा रहे हैं। माता अपने प्यार में आकर बच्चे को कितने लफ़्ज़ों से याद करती है, परन्तु जो माता का बच्चे से रिश्ता है, वह कोई लफ़्ज़ों का रिश्ता नहीं है, वह तो भक्ति और प्यार का रिश्ता होता है। लफ्ज़ तो मां के प्यार को प्रकट करते हैं। मां किसी भी लफज़ के

द्वारा अपने बच्चे को याद कर सकती है। इसी प्रकार मालिक के भक्तों और प्यारों का मालिक से कोई लफ़्ज़ों या शब्दों का रिश्ता नहीं है, बल्कि भक्ति का रिश्ता है, प्यार का रिश्ता है, इश्क का रिश्ता है। हम किसी भी लफ़्ज़ के द्वारा अपने प्यार को प्रकट कर सकते हैं। दसवीं पातिशाही श्री गुरु गोबिन्दसिंह जी ने 'जाप साहिब' में कोई ग्यारह सौ, बारह सौ शब्दों के द्वारा उस परमात्मा को याद किया है। अन्त में प्रत्येक महात्मा ने उसको 'अनामी अनामी' कह दिया कि जिसके हमने इतने नाम रखे हैं, वास्तव में उस परमात्मा का कोई भी नाम नहीं है। सो ये जितने भी हमारे शब्द हैं, ये वर्णात्मक शब्द हैं। परन्तु हरएक महात्मा उस सच्चे शब्द की, सच्चे नाम की महिमा करता है, जिसका न ज़बान से वर्णन किया जा सकता है, जो न आँखों से देखा जा सकता है, न कानों से सुना जा सकता है। जिसको हुज़ूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी) 'अलिखित कानून', 'अनबोली भाषा' कहकर याद किया करते थे। हज़रत ईसा ने बाईबिल में समझाया है; "आँखें होते हुए तुम देख नहीं सकते, कान होते हुए तुम सुन नहीं सकते।" कि आँखें होने के बावजूद आप उसको देख नहीं सकते, कान होने के बावजूद आप उसको सुन नहीं सकते। गुरु साहिब समझाते हैं :

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. १३९

कि आप उस शब्द, नाम या हुकम को पकड़ कर अपने परमात्मा को मिल सकेंगे, जिसको न तो किसी की आँखें देखती हैं, न किसी की जबान वर्णन करती है, न किसी के कान सुनते हैं, जिस तक न किसी के हाथ लेकर पहुँचते हैं, न किसी के पैर लेकर पहुँचते हैं। परन्तु गुरु साहिब कहते हैं कि उस चीज़ को आप जीते-जी मर कर प्राप्त कर सकते हैं। जीते-जी मरने का मतलब है जिस चीज़ को नौ द्वारों से ख़ाली निकाल कर आँखों के पीछे लाकर प्राप्त कर सकते हैं। इसको 'जीवि

मरना' महात्माओं ने इसलिए कहा है कि जब भी किसी की मृत्यु होती है, पहले उसके हाथ-पैर ठण्डे हो जाते हैं, टाँगें ठण्डी हो जाती हैं, फिर शरीर ठण्डा होना शुरू हो जाता है। उसके अन्दर आत्मा भी होती है, कई बार उसे अपने-आप का होश भी होता है। जब उसकी आत्मा सिमट कर आँखों तक आ जाती है और शरीर को छोड़ कर एक ओर हो जाती है, हम कहते हैं कि वह गुज़र गया। महात्मा समझाते हैं कि यदि आप अपने अन्दर शब्द के प्रकाश को देखना चाहते हैं, शब्द की आवाज़ को सुनना चाहते हैं, तो आप ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करके जीते-जी मरने की युक्ति सीखें। वह आवाज़ और प्रकाश, जो हरएक की आँखों के पीछे है, उसका इन बाहर की आँखों से सम्बन्ध नहीं है, इन बाहर के कानों से सम्बन्ध नहीं है। न उसको हाथ पकड़ सकेंगे, न ज़बान उसका वर्णन कर सकेगी। ये जितने भी हमारे लफ्ज़ या वर्णात्मक शब्द हैं, ये हमारे साधन हैं। वह धुनात्मक शब्द हमारी मंज़िल है, हमारा लक्ष्य है। हमें लफ्ज़ों से प्यार करके कभी जातियों, धर्मों और देशों के झगड़े खड़े नहीं करने चाहियें, हमें तो इन लफ्ज़ों के द्वारा सच्चे शब्द की खोज करनी है, सच्चे नाम की खोज करनी है।

आप प्रत्येक वर्णात्मक शब्द के इतिहास की खोज कर सकते हैं। उसकी अवधि निश्चित कर सकते हैं। श्री हुज़ूर स्वामीजी महाराज को आये केवल सौ वर्ष हुए हैं, उनके जाने के बाद हमने उस परमात्मा को 'राधास्वामी' कहना शुरू कर दिया। गुरु नानक साहिब को आये पाँच सौ वर्ष हुए हैं, उनके जाने के बाद हम परमात्मा को 'वाहिगुरु-वाहिगुरु' कहने लगे। मुहम्मद साहिब को आये तेरह-चौदह सौ वर्ष हुए हैं, जिनके बाद हम 'अल्लाह-अल्लाह' कहने लगे। रामचन्द्र जी महाराज को आये इससे भी अधिक समय हुआ है, जिनके जाने के बाद हम 'राम-राम' कहने लगे। आप हर लफ्ज़ या वर्णात्मक शब्द के इतिहास का पता लगा सकते हैं, हर शब्द की अवधि निश्चित कर सकते हैं, परन्तु जिस चीज़ की महात्मा महिमा करते हैं, उसने तो संसार की रचना की है, उसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं।

जिस शक्ति ने संसार की रचना की है, उसकी अवधि कौन निश्चित कर सकता है। गुरु अमरदास साहिब फ़रमाते हैं : 'नामै ही ते सभु किछु होआ बिनु सतिगुरु नाम न जापै ॥' (आदि ग्रन्थ पृ. ७५३) कि जो कुछ भी आप संसार में आँखों से देख रहे हैं, यह सब कुछ परमात्मा ने नाम के द्वारा पैदा किया है। जिस वस्तु ने संसार की रचना की है, जिसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं, वह वस्तु हमारे लफ्ज़ किस प्रकार हो सकते हैं ? वह तो प्रभु की रचनात्मक शक्ति है, जिसने सारे संसार की रचना की है। गुरु नानक साहिब फरमाते हैं :

सबदे धरती सबदे आकास, सबदे सबद भइआ परगास ॥
सगली स्रिसटि सबद कै पाछै नानक सबद घटे घट आछै ॥
(प्राण संगली)

आप फ़रमाते हैं कि उस शब्द ने सूर्य पैदा किया, चन्द्र पैदा किया, धरती पैदा की, सारे संसार की रचना की और वह शब्द रात-दिन सबके अन्दर धुनकारें दे रहा है। जब तक आप उस रचना करने वाली शक्ति या शब्द और नाम के साथ अन्दर ख़याल नहीं जोड़ेंगे, आप मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते, आपका जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा नहीं हो सकता।

ये जितने भी हमारे धर्म हैं, इनके रीति-रिवाज़ अपने-अपने हैं परन्तु जो रूहानियत है, वास्तविकता है, हकीकत है, सारवस्तु है, वह सभी के अन्दर एक ही चीज़ है। उस एक रूहानियत को भिन्न-भिन्न महात्माओं ने भिन्न-भिन्न जातियों, धर्मों व देशों के अन्दर बैठकर विभिन्न नामों से समझाने का प्रयत्न किया है। ऋषि-मुनियों ने उसको 'आकाश वाणी', 'राम नाम', 'राम ध्वनि', 'निर्मल नाद', 'दिव्य-ध्वनि' आदि कई शब्दों से याद किया है। गुरु नानक साहिब उसी रूहानियत को 'गुरु की वाणी', 'धुर की वाणी', 'सच्ची वाणी', 'अमर', 'हुकम' 'अकथ कथा', 'हरि कीर्तन' आदि कई शब्दों से याद करते हैं। स्वामीजी महाराज उसी रूहानियत को 'शब्द', 'नाम', 'निर्मल नाद' आदि कह कर याद करते हैं। मुसलमान फ़कीरों ने उसको 'कलमा', 'बां

आसमानी', कलामे इलाही', 'निदाए सुलतानी' आदि कहा है। हज़रत ईसा ने उसी शक्ति को 'वर्ड' या 'लोगोस' कहकर याद किया है। चीनी महात्मा ने उसी रूहानियत को 'ताउ' कह दिया है। हमें लफ्ज़ों या शब्दों के वाद-विवाद में नहीं उलझना चाहिये, हमें तो शरीर के अन्दर उस रूहानियत की खोज करनी है, जिसने संसार की रचना की है, जिसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं। जब तक हम उस नुक्ते या केन्द्र पर अपना ख़याल ही इकट्ठा नहीं करते, जहाँ दाता दात दे रहा है, बख़्शिश कर रहा है, जहाँ अमृत रूपी नाम बरस रहा है, हम कभी भी उस अमृत को पी नहीं सकते। उस अमृत को हज़रत ईसा 'जीवित जल' कहकर याद करते हैं। मुसलमान फकीरों ने उसको 'आबे-हयात' कहा है, ऋषि-मुनियों ने उसको 'अमृत' कहकर वर्णन किया है। वह अमृत कभी किसी को बाहर से नहीं मिलेगा, वह अमृत तो हरएक की आँखों के पीछे बरस रहा है। गुरु नानक साहिब कहते हैं: 'नउ दरवाजे नवे दर फीके रसु अंमृतु दसवे चुईजै ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. १३२३) कि भाई, आँखों के नीचे-नीचे तो इन्द्रियों के भोग हैं, विषय-विकारों, शराबों-कबाबों के स्वाद हैं। अगर तू रस से भरे अमृत को पीना चाहता है तो अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा कर। पर जब तक ख़याल को आँखों के पीछे नहीं लाते, जहाँ अमृत बरस रहा है, हम अमृत को किस प्रकार पी सकेंगे ? कितनी भी तेज वर्षा क्यों न हो रही हो, यदि कोई बर्तन को उलटा दे तो उस में पानी की एक बूँद भी नहीं जा सकेगी। अगर बर्तन को सीधा कर देंगे, तो पहली नहीं, दूसरी या तीसरी बारिश से भर जायेगा। इसलिये महात्मा कहते हैं कि यदि तुम अमृत को पीना चाहते हो, शब्द के प्रकाश को देखना चाहते हो, अन्दर रूहानी सफर तय करना चाहते हो तो सुमरिन और ध्यान के द्वारा अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करो।

इसीलिये प्रत्येक महात्मा हमें सुरत-शब्द की कमाई करने का साधन बताता है, नाम की कमाई करने के साधन का वर्णन करता है। महात्मा ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों में शब्द और नाम की महिमा

लिख देते हैं। ग्रन्थों-पोथियों को पढ़ने से हमारे अन्दर शब्द और नाम की कमाई करने का शौक पैदा हो जाता है, प्यार पैदा हो जाता है, विरह पैदा हो जाती है, तड़प पैदा हो जाती है। इनको पढ़ने से हमें नाम की कमाई करने के साधन का पता चल जाता है, तरीके का पता लग जाता है। परन्तु ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों के पढ़ने से ख़याल नाम के साथ नहीं जुड़ता। जो कुछ रात-दिन पढ़ते हैं उस पर अमल करने से ख़याल शब्द या नाम से जुड़ेगा।

डॉक्टर की पुस्तकों में नुस्खे लिखे रहते हैं, दवाइयाँ तो डॉक्टर की अल्मारी में होती हैं। अगर कोई बीमार सारा दिन डॉक्टर की किताब लेकर पढ़ता रहे, न तो उसकी बीमारी जायेगी, न ही वह कभी ठीक हो सकेगा। अगर डॉक्टर के पास जाकर उस नुस्खे के अनुसार दवाई का प्रयोग करना शुरू कर देंगे, उसको किताब पढ़ने का भी फायदा हो जायेगा, वह ठीक भी हो जायेगा। बीमारी तो रोगी के शरीर के अन्दर है, दवाई डॉक्टर की अल्मारी के अन्दर है, जिसका वर्णन किताब में है। सो जब तक उस किताब के अनुसार डॉक्टर की अल्मारी वाली दवाई हमारे शरीर में नहीं जायेगी, हमारा बीमारी से छुटकारा किस प्रकार हो सकेगा?

रेल का टाईम-टेबल पढ़ने से कभी किसी की रेल-यात्रा तय नहीं होती। केवल यात्रा के विषय में जानकारी मिल जाती है कि गाड़ी आगरा से दिल्ली की ओर किस समय जायेगी, कौन-कौन से स्टेशन रास्ते में आयेंगे, कितनी लम्बी यात्रा है, क्या-क्या सुविधायें सरकार ने मार्ग में रखी हुई हैं। टाइम-टेबल देखकर हम हर प्रकार की सूचना प्राप्त कर सकते हैं, परन्तु टाइम-टेबल पढ़ने-पढ़ाने से हम कभी दिल्ली नहीं पहुँच सकते। जब तक उस सूचना के अनुसार स्टेशन पर पहुँच कर, टिकट लेकर गाड़ी में नहीं बैठते, हमारी यात्रा तय नहीं हो सकती। इसी प्रकार खाना बनाने की पुस्तक सारा दिन लेकर पढ़ते रहें, पढ़ाते रहें, न पेट भरता है, न स्वाद ही आता है। अगर उस पुस्तक के अनुसार राशन लाकर खाना बना लें, खा लें, पेट भी भर जायेगा

स्वाद भी आ जायेगा। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास ।।
पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास ।।
नानक लेखै इक गल होर हउमै झखणा झाख ।। (आदि ग्रन्थ, पृ० ४६७)

कि आप सारा दिन पढ़ें, सारा साल पढ़ें, सारी उमर पढ़ें, साँस-साँस पढ़ें, एक चीज़ आप के लेखे लिखी जायेगी, जो आपकी सुरत आँखों के पीछे आकर अन्दर शब्द को पकड़ती है ।

मेरे कहने का यह भाव न लें कि ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़ना छोड़ देना है। अवश्य पढ़ना है। महात्माओं ने हमारे पढ़ने के लिए ही लिखे हैं, परन्तु इनको सोचकर पढ़ना है, समझ कर पढ़ना है। पढ़ने के बाद हमारा कर्तव्य समाप्त नहीं होता, जो कुछ पढ़ा है, सुना है, हमें उस पर अमल भी करना है। जब तक अमल नहीं करेंगे, हम कभी भी उन ग्रन्थ-पोथियों से लाभ नहीं उठा सकेंगे। गुरु साहिब फ़रमाते हैं : 'पड़ि पंडितु अवरा समझाए ।। घर जलते की खबरि न पाए ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. १०४६) कि पंडित या भाई लोग संसार को पढ़-पढ़ कर समझाने की कोशिश ज़रूर करते हैं, परन्तु जो उनके अपने घर आग लगी हुई है, जो काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार की आग में वे ख़ुद जल रहे हैं, उस आग को बुझाने की कोशिश नहीं करते। हम पढ़-पढ़ कर संसार को लैक्चर दे रहे हैं। अपने घर में आग लगी हुई है, लोगों के घरों की आग बुझाने की चिन्ता लगी हुई है। अपना घर लूटा जा रहा है, लोगों के घरों की चौकीदारी करने में लगे हुए हैं। अपना बोझ तो उठा नहीं सकते, पराये गधे बने हुए हैं। अपने आप को भी धोखा दे रहे हैं, दुनिया को भी धोखा दे रहे हैं। गुरु साहिब कहते हैं :

बिनु सतिगुर सेवे नामु न पाईऐ पड़ि थाके सांति न आई हे ।।
(आदि ग्रन्थ, पृ० १०४६)

आप फ़रमाते हैं कि जब तक तुम नाम की कमाई नहीं करोगे, शब्द की कमाई नहीं करोगे, पढ़-पढ़ कर थक जाओ, चूर हो जाओ, तुम्हारे मन में कभी सुख नहीं आ सकता, शांति नहीं आ सकती। यह

पढ़ना तो हमारा साधन है, जो वस्तु हमें प्राप्त करनी है, वह सच्चा शब्द या सच्चा नाम है।

यदि आपको काश्मीर जाना हो, आप क्या करेंगे ? काश्मीर की गाइड बुक ले आयेंगे, जिसको पढ़कर आपको काश्मीर की घाटी की सुन्दरता का पता चल जायेगा, मार्ग की दुर्गम घाटियों का पता चल जायेगा। घाटियों को पार करने के साधन और तरीके मालूम हो जायेंगे। परन्तु उसको पढ़ने से काश्मीर की घाटी दिखाई नहीं देगी। जब तक आप उन घाटियों को पार नहीं करते, आप काश्मीर की घाटी किस प्रकार देख सकेंगे ? हम पढ़ने-पढ़ाने पर ज़ोर देते हैं, परन्तु क्या पढ़ते हैं, क्या पढ़ाते हैं, किसी को कुछ पता नहीं। न तो बैठकर कोई सुनता है, न कोई खुद बैठकर पढ़ता है। बेचारे पंडित और भाई घर में पढ़ते रहते हैं, हम दुनिया के सैर-रंग व तमाशे देखते रहते हैं और मन में सोच लेते हैं कि कितना पुण्य करने में लगे हुए हैं ? यदि खुद बैठकर पढ़ें, खुद बैठकर सुनें, महात्माओं के वचन हमारे कानों में पड़ें, हमें अपनी कमज़ोरियों का पता चले, मन में परमार्थ का शौक और प्यार पैदा हो, तो उस पढ़ने का भी लाभ होगा, पढ़ाने का भी लाभ होगा। हमने तो रिवाज बनाया हुआ है, कि शायद धन के बल पर ही हम मुक्ति प्राप्त कर लेंगे। इसलिए महात्मा प्यार से समझाते हैं कि ग्रन्थों-पोथियों के पढ़ने में फायदा नहीं है, जो पढ़ते-सुनते हैं, उस पर अमल करने में फ़ायदा है। अमल क्या करना है ? सुमिरन और ध्यान के द्वारा नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर, आँखों के पीछे लाकर अन्दर शब्द से जोड़ना है, नाम से जोड़ना है।

आप देखें, सत्संग में शब्द और नाम की चर्चा की जा रही है; नाम के विषय में सोच-विचार किया जा रहा है। परन्तु सत्संग सुनने से तो ख़याल शब्द और नाम से नहीं जुड़ेगा, जो कुछ हम सुनते हैं, उस पर अमल करने से ख़याल अन्दर शब्द और नाम के साथ जुड़ेगा। हम बाहरमुखी हो जाते हैं कि सुबह सत्संग सुन लिया, शाम को सत्संग सुन लिया, बस हमारा सारे दिन का काम पूरा हो गया। परन्तु जब

तक जो सुनते हैं उस पर अमल नहीं करते, हम कभी भी अन्दर शब्द का स्वाद प्राप्त नहीं कर सकेंगे, नाम का स्वाद प्राप्त नहीं कर सकेंगे। इसलिए बिना अमल के पढ़ने-पढ़ाने या सत्संग सुनने का कभी पूरा लाभ नहीं हो सकता, क्योंकि जो कुछ मिलना है, वह शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है। गुरु अमरदास जी शब्द या नाम की कमाई की प्रशंसा करते हुए कहते हैं: 'बिनु नावै होर पूज न होवी भरमि भुली लोकाई ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ९१०)। कि शब्द और नाम की कमाई के बिना परमात्मा की कोई भक्ति नहीं है, परमात्मा की कोई पूजा नहीं है, व्यर्थ ही संसार के जीव वहमों-भ्रमों में फँस कर भूले फिरते हैं। आप कहते हैं : 'नामु विसारि चलहि अन मारगि अंत कालि पछुताही ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ११५३)। आप नाम की कमाई का तरीका छोड़कर जिस भी मार्ग पर चलने की कोशिश करेंगे, अन्त में आपको मृत्यु के समय पछताना पड़ेगा कि व्यर्थ बहुमूल्य समय को नष्ट कर दिया। क्यों पछताना पड़ेगा ? गुरु साहिब कहते हैं : 'विणु नावै दरि ढोई नाही ता जमु करे खुआरी।' (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४)। कि शब्द और नाम की कमाई के बिना कभी मालिक के घर नहीं पहुँच सकेंगे, यमदूतों के हाथों खराब होना पड़ेगा। पर जब नाम की कमाई करते हैं तो क्या लाभ होता है ? कबीर साहिब कहते हैं :

जब ही नाम हिरदे धरिउ, भइउ पाप का नास।
जैसे चिंगी आग की, पडी पुरानी घास ।।

आप कितना भी सूखा घास लाकर इकट्ठा क्यों न कर लें, आग की एक चिंगारी सारे घास को जला कर राख कर देती है। इसी प्रकार हम साकत पुरुषों के कितने ही बुरे और खोटे पाप और कर्म क्यों न हों, वह शब्द और नाम की कमाई सारे कर्मों का क्रम ही समाप्त कर देती है। स्वामीजी महाराज कहते हैं :

गुरु कहे खोल कर भाई। लग शब्द अनाहद जाई ।।
बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छुटे न कूजा ।।

(सार बचन, पृ० १६१)

कि शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई उपाय नहीं है, साधन नहीं है कि तुम देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर सको । गुरु नानक साहिब कहते हैं : बिनु सबदै अंतरि आनेरा ।। न वसतु लहै न चूकै फेरा ।। (आदि ग्रन्थ, पृ. १२४) । कि शब्द और नाम की कमाई के बिना न कभी तुम्हारे अन्दर से अज्ञानता का अँधेरा दूर होगा, न तुम्हें कभी परमात्मा मिलेगा, न कभी तुम्हारा देह के बन्धनों से छुटकारा होगा । जो कुछ मिलना है, शब्द या नाम की कमाई से मिलना है । यही कारण है कि प्रत्येक महात्मा उस सच्चे नाम का प्रचार करता है, उस सच्चे शब्द का प्रचार करता है । परन्तु जब तक हमारी समझ में न आये कि महात्मा शब्द और नाम किसको कहते हैं, शब्द और नाम का कौन-सा स्थान है, किस प्रकार ख़याल को शब्द और नाम के साथ जोड़ना है, कितने ही सत्संग क्यों न सुन लें, किसी भी महात्मा की वाणी क्यों न पढ़ लें, हम उनके उपदेश से पूरा-पूरा लाभ नहीं उठा सकेंगे । इसलिये यहाँ गुरु साहिब कहते हैं : 'सेवा सुरति सबदि चितु लाए ।।' कि जब गुरुमुखों के सत्संग में जाकर, गुरुमुखों की संगति में जाकर, सुरत-शब्द का अभ्यास करेंगे, नाम की कमाई करेंगे, संसार से मोह और प्यार निकल जायेगा, परमात्मा के साथ मोह और प्यार पैदा हो जायेगा ।

हमारा मन लज़्ज़त का आशिक है । जब तक इसको संसार के मोह और प्यार से ऊँचा और पवित्र प्यार नहीं मिलता, यह कभी भी संसार का मोह और प्यार छोड़ने को तैयार नहीं होता । उस शब्द और नाम की आसक्ति हमें संसार की ओर से सदा के लिए अनासक्त कर देती है । त्याग कभी किसी में प्रभु का प्यार पैदा नहीं कर सकता । केवल शब्द का प्यार या नाम की आसक्ति ही हमारे अन्दर सच्ची अनासक्ति या वैराग्य पैदा कर सकती है । यदि एक लड़की को उसके विवाह से पहले समझायें कि देख बेटा, तेरे विवाह की तारीख पक्की कर दी है, तू माता-पिता का प्यार छोड़ दे, भाई-बहनों का स्नेह त्याग दे, सखी सहेलियों का प्रेम छोड दे, तो वह बेचारी सारी उमर क्यों न लगी रहे,

कभी सफल नहीं होगी। जब उसका विवाह हो जाता है, पति से प्यार उत्पन्न हो जाता है, तो वह माता-पिता भी भूल जाती है, बहन-भाई भी भूल जाती है, सखी-सहेलियों को भी भूल जाती है। एक आदमी के मोह और प्यार ने बाकी सबका मोह और प्यार उसके अन्दर से निकाल दिया। गुरु साहिब भी यही कहते हैं कि जो मन इस समय दुनिया में फैला हुआ है; रचना के मोह और प्यार में फँसा हुआ है, जब आप शब्द या नाम का अभ्यास करेंगे तो इसके अन्दर से दुनिया का मोह और प्यार निकल जायेगा और मालिक का मोह और प्यार पैदा हो जाएगा।

गुरु साहिब ने सुरत-शब्द के अभ्यास को सेवा कहा है। असल में जो सुरत-शब्द की सेवा है, वह सबसे ऊँची और पवित्र सेवा है। सेवा से भाव गुरुमुखों के कथन के अनुसार शब्द की कमाई करना है, नाम की कमाई करना है। सेवा का यह अर्थ नहीं कि गुरुमुखों को धन-दौलत देनी है, जायदाद देनी है। गुरुमुख तो सेवक से एक पाई भी नहीं लेते, यदि लेते हैं तो वे गुरुमुख नहीं है। महात्मा का तो उपदेश ही यही है कि नेक कमाई करते हुए साध-संगत की मुफ्त सेवा करनी है। आप किसी भी महात्मा के जीवन का वर्णन पढ़कर देखें, प्रत्येक महात्मा नेक कमाई पर ज़ोर देता है। आप देख लें, गुरु नानक साहिब ने करतारपुर (जो अब पाकिस्तान में है) में स्वयं अपने हाथों से खेती की। आपने अपनी कमाई के द्वारा अपना गुज़ारा किया, अपने बाल-बच्चों का पालन-पोषण किया और सारी उमर साध-संगत की मुफ़्त सेवा की। आप संगत को वाणी में क्या आदेश दे गये हैं :

गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ ।। ता कै मूलि न लगीऐ पाइ ।।
घालि खाइ किछु हथहु देइ ।। नानक राहु पछाणहि सेइ ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ० १२४५)

कि यदि कोई गुरु या पीर होकर शिष्यों से या संगत से पैसे मांगते फिरते हैं या कुछ इकट्ठा करते फिरते हैं, उनके पैरों में माथा ही न टेको। किस प्रकार के महात्मा के पैरों में माथा टेकना है ? 'घालि खाइ

किछु हथहु देइ ।' जो खुद नेक कमाई करते हुए साध-संगत की सेवा करते हैं।

कबीर साहिब का जीवन पढ़कर देखें। आपने सारी उमर कपड़ा बुन कर अपना गुज़र किया, यद्यपि बलख बुख़ारा जैसे अमीर भी आप के सेवक थे, जो आपको महलों में भी रख सकते थे। कबीर साहिब कहते हैं :

शिश को ऐसा चाहिये, गुरु को सरबस देइ ।
गुरु को ऐसा चाहिये, शिश का कछु न लेइ ।।

सेवक का धर्म है कि जो कुछ है उसे गुरुमुखों का समझ कर बरते, परन्तु गुरुमुखों का भी कोई नियम है कि सेवक की पाई तक न ले। कबीर साहिब कहते हैं :

मर जाऊँ मागूँ नहीं, अपने तन के काज ।
परमारथ के कारनै, मोहि न आवै लाज ।।

संत-महात्मा साध-संगत के अन्दर बेशक हमारा परोपकार करा देंगे, परन्तु अपने लिये कभी किसी के आगे हाथ नहीं फैलाते। रविदास महात्मा का जीवन पढ़कर देखें। आपने सारी उमर जूतियाँ बना कर गुज़ारा किया, हालाँकि राजा पीपा, जोकि राजपूत राजा था, भी आपका सेवक था और मीराबाई, जोकि मेवाड़ की रानी थी, भी आपकी शिष्या थी। परन्तु फिर भी महात्मा ने ज़िन्दगी की मिसाल बनकर दिखाया। आप हुज़ूर स्वामीजी महाराज के बारे में जानते हैं, बाबाजी (बाबा जैमलसिंह जी) के विषय में तो जानते ही हैं। महात्मा हमेशा नेक कमाई करके साध-संगत की सेवा करते हैं। इसलिए सेवा से यह मतलब नहीं कि अपनी सम्पत्ति गुरुमुखों को सौंप देनी है। सेवा का अर्थ है उनके उपदेश पर अमल करना है और उनके आदेश के अनुसार सुमिरन और ध्यान के द्वारा सुरत को आँखों के पीछे लाकर अन्दर शब्द से जोड़ना है, नाम से जोड़ना है। गुरु साहिब कहते हैं कि जब तुम सुरत-शब्द की सेवा करोगे, नाम की कमाई करोगे तो तुम्हारा संसार से यह मोह और प्यार निकल जायेगा, फिर तुम्हारा परमात्मा से मोह

और प्यार पैदा हो जायेगा ।

हउमै मारि सदा सुखु पाइआ माइआ मोहु चुकावणिआ ।

आप फ़रमाते हैं कि संसार के सभी जीव माया में फँसकर मोह की मीठी नींद सो रहे हैं, मालिक की ओर किसी का ध्यान ही नहीं जाता । कल मैंने खोल कर अर्ज़ की थी कि वह परमात्मा कहीं बाहर नहीं है । वह हमारे शरीर के अन्दर है, हमारी देह और हमारे वजूद के अन्दर है । पर हमें दिखाई क्यों नहीं देता ? गुरु अर्जुनदेव जी कहते है : 'एका संगति इकतु गृहि बसते मिलि बात न करते भाई ।' (आदि ग्रन्थ, पृ. २०५) । दोनों इकट्ठे रहते हैं, दोनों का एक ही घर में निवास है, परन्तु आपस में मिलाप नहीं है । आत्मा भी इसी शरीर में है, परमात्मा भी इसी शरीर में है, पर न कभी हमारी आत्मा ने परमात्मा को देखा है, न कभी हमारी आत्मा सुहागिन हुई । गुरु साहिब कारण बताते हैं : 'अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. २०५) । परमात्मा अवश्य सबके अन्दर है, दिखाई केवल इसलिये नहीं देता कि हमारे और मालिक के बीच हौमैं की रुकावट है, खुदी, अहं या अहंकार की रुकावट है । गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'जीवन मुकतु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. १०१०) । आप कहते हैं कि यदि तुम्हारे अन्दर से होमैं निकल जाये, संसार का मोह और प्यार निकल जाये तो मौत के बाद तुम जीते-जी मुक्ति प्राप्त कर सकोगे ?

हौमैं क्या है ? जो हम सारा दिन सोचते रहते हैं कि यह मेरी जाति है, मेरा धर्म है, मेरा देश है, मेरी सन्तान है, मेरी सम्पत्ति है, यही हौमैं है । यह जिसको हम सारा दिन 'मेरा-मेरा' करते हैं, यह सब-कुछ ही उस परमात्मा का है । हम अपने आपको मालिक से अलग समझे बैठे हैं तथा दुनिया की शक्लों और पदार्थों को अपना बनाने की कोशिश करते हैं । ये न तो कभी किसी के बने हैं, न बन ही सकते हैं । परन्तु जो प्रयत्न करते हैं कि ये अपने बन जायें, वह हमें इन के मोह और प्यार में फँसा देते हैं । इतना इनमें मोह और प्यार पैदा हो जाता है

कि रात को स्वप्न भी इनके ही आते हैं और मृत्यु के समय इनकी शक्लें सिनेमा के पर्दे के समान हमारी आँखों के आगे आकर खड़ी हो जाती हैं। 'जहां आसा तहां बासा।' जहाँ हमारा अंतिम समय ख़याल होता है, हम संसार के जीव उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं। कौन-सी वस्तु हमें बार-बार देह के बंधनों में लाई ? यह संसार का मोह लाया, संसार का प्यार लाया। गुरु साहिब कहते हैं कि जब तुम शब्द और नाम की कमाई करोगे, तुम्हारे अन्दर से संसार का मोह निकल जायेगा, संसार का प्यार निकल जायेगा, तुम्हारे अन्दर से हौमैं निकल जायेगा।

जंगलों-पहाड़ों में छिपने से, मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों में जाने से, सत्संग सुनने से, किसी के अन्दर से हौमैं का रोग दूर नहीं होता, क्योंकि वे ही इच्छाएँ, वे ही तृष्णाएँ हरएक के अन्दर दबी रहती हैं। जब मन का ज़ोर पड़ता है, फिर अंगुलियों पर नचाना शुरू कर देता है, बल्कि हमारी अवस्था साधारण मनुष्यों से भी बदतर और बुरी हो जाती है। जितना किसी चीज़ को दबाते हैं, उतना वह ज़ोर मारती है। जब तक मन को शब्द का स्वाद नहीं मिलता, नाम का स्वाद नहीं मिलता, यह कभी संसार का मोह नहीं छोड़ता, कभी संसार का प्यार नहीं छोड़ता। इसलिये गुरु साहिब ने दावे से कहा है : 'बिनु सबदै हउमै किनि मारी ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. १०४६) कि जितनी इच्छा हो जंगलों-पहाड़ों में छिप कर देख लो, मन्दिरों, मसजिदों और गुरुद्वारों में जाकर देख लो, सत्संग सुनकर देख लो, शब्द और नाम की कमाई के बिना तुम्हारे अन्दर से हौमैं नहीं निकल सकेगी, संसार का मोह और प्यार नहीं निकल सकेगा। इसलिये यहाँ प्यार से समझाते हैं कि हम सब संसार के जीव माया में फँसकर मोह की मीठी नींद में सोये हुए हैं, हौमैं की बीमारी में उलझे हुए हैं। जब तक हम नाम की कमाई नहीं करेंगे, शब्द की कमाई नहीं करेंगे, संसार से हमारा कभी छुटकारा नहीं हो सकेगा। गुरु साहिब कहते हैं :

हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि ॥
किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. ४६६)

हौमैं बड़ा पुराना रोग है, हौमैं के कारण ही हम रचना का हिस्सा बने हुए हैं, हमारे बस में ही नहीं कि हम हौमैं के रोग से बच सकें। 'किरपा करे जे आपणी', कि परमात्मा दया करे, मेहर करे, बख़्शिश करे, तो ही हम इससे छूट सकते हैं। क्या बख़्शिश करे ? 'गुरु का सबदु कमाहि।' वह मालिक दया करके गुरुमुखों की संगति और साथ दे दे, वे गुरुमुख हमारे ख़याल को शब्द और नाम से जोड़ दें, और हम शब्द और नाम की कमाई करें, तभी हौमैं का रोग हमारे मार्ग से दूर होता है, तभी संसार का मोह और प्यार हमारे अन्दर से निकलता है।

हउ वारी जीउ वारी सतिगुर कै बलिहारणिआ ॥

अब आप फ़रमाते हैं कि हमारे अन्दर से संसार का मोह और प्यार, शब्द और नाम की कमाई के द्वारा निकलता है, परन्तु नाम की कमाई करने के तरीके का हमें गुरुमुखों से पता लगता है, सतगुरु से पता लगता है। इसलिये आप हमारी ओर से मालिक से प्रार्थना करते हैं कि हम अपने सतगुरु पर बलिहार जाते हैं, कुर्बान जाते हैं, अपने आप को उन पर न्यौछावर करते हैं, जिन्होंने इन वहमों, भ्रमों और संकल्पों से हमारे ख़याल को निकाल दिया है, हमारे ख़याल को शब्द से जोड़ दिया है, नाम से जोड़ दिया है। सतगुरु की दया से अब हमने अपने अन्दर शब्द की लज़्ज़त प्राप्त करनी शुरू कर दी है, नाम का स्वाद प्राप्त करना शुरू कर दिया है। आपके समझाने का भाव है कि गुरुमुखों के द्वारा ही हम अन्तर में शब्द और नाम का स्वाद प्राप्त कर सकते हैं। गुरुमुख हमारे अन्दर घोल कर कुछ नहीं डालते। परमात्मा ने वह दौलत हमारे अन्दर, हमारे ही लिये रखी हुई है, परन्तु उस दौलत को अन्दर प्राप्त किस प्रकार करना है, यह गुरुमुखों से पता चलता है, साधु, संतों और महात्माओं से पता चलता है। गुरु अर्जुन साहिब कहते हैं :

जिस का गृहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ॥
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ॥
(आदि ग्रन्थ, पृ. २०५)

कि जिस परमेश्वर ने तुम्हें पैदा किया है, उसने नाम रूपी दौलत तुम्हारे अन्दर, तुम्हारे लिये रखकर उसकी कुंजी गुरुमुखों के हवाले कर दी है, उसका भेद गुरुमुखों के हवाले कर दिया है। आप मन-बुद्धि से ग्रन्थ-पोथियाँ पढ़कर, सत्संग सुनकर कितना ही उस चीज़ की खोज करने की कोशिश करें, कभी सफल नहीं हो सकेंगे, जब तक गुरुमुखों की शरण प्राप्त नहीं करते, उनके बताये हुए उपदेश पर नहीं चलते। गुरु रामदास जी समझाते हैं :

कासट महि जिउ है बैसंतरु मथि संजमि काढि कढीजै ॥
राम नामु है जोति सबाई ततु गुरमति काढि लईजै ॥
(आदि ग्रन्थ, पृ. १३२३)

भाई, जिस प्रकार लकड़ी में अग्नि है, पर न तुझे दिखाई देती है, न तू कभी उससे फ़ायदा उठा सकता है। यदि युक्ति के द्वारा तू लकड़ी पर लकड़ी रगड़नी शुरू कर देगा तो तू अग्नि पैदा कर सकेगा, देख भी सकेगा, उससे फायदा भी उठा सकेगा। गुरु साहिब कहते हैं कि इसी प्रकार वह राम नाम की ज्योति तुम्हारे हरएक की आँखों के पीछे जल रही है, वह राम नाम की धुन हरएक की आँखों के पीछे धुनकारें दे रही है, परन्तु 'गुरमति काढि लईजै'—जब तक गुरुमुखों के उपदेश पर नहीं चलेंगे, न तुम उस ज्योति को देख सकोगे, न उस शब्द की आवाज़ को पकड़ सकोगे। गुरुमुखों का क्या उपदेश है ?

नउ दरवाजे नवे दर फीके रसु अंमृतु दसवे चुईजै ॥
(आदि ग्रन्थ, पृ. १३२३)

गुरुमुखों का उपदेश है कि आँखों के नीचे-नीचे तो इन्द्रियों के भोग हैं, विषय-विकारों, शराबों-कबाबों के स्वाद हैं। इसी शब्द में आप समझायेंगे कि यदि गुरुमत पर चलना चाहते हो तो ख़याल को आंखों के पीछे इकट्ठा करो। वह नाम रूपी अमृत तुम्हारे अन्दर बरसता है, वह ज्योति तुम्हारे अन्तर में जल रही है, वह राम नाम की धुन तुम्हारे अन्दर दिन-रात धुनकारें दे रही है। पर यह ज्योति, यह प्रकाश, यह धुन आपकी आँखों के पीछे है। आँखों के नीचे इन्द्रियों के स्वाद हैं,

गुरमत तो आँखों के ऊपर जाकर शुरू होता है। जब तक हम आँखों से नीचे-नीचे बैठे हैं, हम मन-मत पर चल रहे हैं। गुरु साहिब प्यार से समझाते हैं कि क्योंकि अब हमने सतगुरु की दया-मेहर से गुरुमत पर चलना शुरू कर दिया है, हमारा इन वहमों, भ्रमों, संकल्पों व कर्मकाण्ड से ख़याल निकल गया है, हम अन्दर सुरत-शब्द के अभ्यास में लग गये हैं, नाम की कमाई में लग गये हैं। इसलिये हम अपने सतगुरु पर बलिहार जाते हैं, कुर्बान जाते हैं, अपने आपको उन पर न्यौछावर करते हैं।

गुरमति परगासु होआ जी अनदिनु हरिगुण गावणिआ ॥

अब आप फ़रमाते हैं कि जब हम सतगुरु की शरण में आ गये, जब हमने उनके उपदेश पर चलना शुरू कर दिया, तो हमारे अन्दर से अज्ञानता का अँधेरा दूर हो गया, हमें अपने अन्दर परमात्मा का नूर, परमात्मा का प्रकाश दिखाई देना शुरू हो गया, हमने अन्दर हरि के गुण गाने शुरू कर दिये। हरि के गुण गाने का अर्थ है कि हमने शब्द की आवाज़ को सुनना शुरू कर दिया, शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर दिया। गुरु साहिब कहते हैं : 'गोबिदु गोबिदु कहै दिन राती गोबिद गुण सबदि सुणावणिआ ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ. १२१)'। भाई गोबिन्द-गोबिन्द कहने से तुझे कभी गोबिन्द नहीं मिलेगा। यदि गोबिन्द के गुण गाना चाहता है तो अपने अन्दर शब्द को सुन, अपने अन्दर नाम के साथ ख़याल को जोड़। गुरु साहिब समझाते हैं कि हमें गुरुमत पर चल कर अन्दर नूर और प्रकाश नज़र आना शुरू हो गया, अन्दर शब्द की आवाज़ आनी शुरू हो गई। हमने उस आवाज़ के द्वारा अन्दर घर की दिशा कायम कर ली, उस प्रकाश के द्वारा अन्दर रूहानी सफ़र तय करना शुरू कर दिया और मंज़िल-दर-मंज़िल वापस अपने घर की ओर चल पड़े।

तनु मनु खोजे ता नाउ पाए ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥
गुर की बाणी अनदिनु गावै सहजे भगति करावणिआ ॥

संतों-महात्माओं की वाणी की, गुरु साहिबों की वाणी की, सबसे

बड़ी खूबी या विशेषता यह है कि अगर एक पंक्ति में कोई सवाल पैदा होता है, अगली पंक्ति उसको बिल्कुल स्पष्ट कर देती है। आप एक पंक्ति के गलत अर्थ करें, अगली पंक्ति आपको आगे ही नहीं चलने देती। इससे पहले आपने गुरुमत के बारे में समझाया था कि गुरुमत पर चलकर आप अपने अन्दर प्रकाश देख सकते हैं, शब्द की आवाज़ को सुन सकते हैं। अब बताते हैं कि गुरुमत से आपका क्या भाव है? आप फ़रमाते हैं : 'तनु मनु खोजे ता नाउ पाए ॥' आप कहते हैं कि गुरुमत से मेरा यह भाव है कि तन के अन्दर मन की खोज करके मन को आँखों के पीछे ठहराओ। फिर क्या होगा? 'गुर की बाणी अनदिनु गावै।' जब मन को तन से निकाल कर आँखों के पीछे ठहरायेंगे, तो आप उस वाणी को सुनना शुरू कर देंगे जिस वाणी का आपको गुरुमुखों से पता चलता है। उस वाणी का गुरुमुखों से पता चलता है इसलिये उसको 'गुर की बाणी' कहते हैं। फिर कहते हैं 'अनदिनु' कि वह वाणी चौबीस घण्टे तुम्हारे अन्दर धुनकारें दे रही है और 'सहिजे भगति करावणिआ', कि जब ख़याल अन्दर उस वाणी से जोड़ लेते हैं, तो मन अपने आप ही मालिक की भक्ति में लग जाता है। गुरु साहिब के कहने का भाव है कि सुमिरन और ध्यान के द्वारा मन को नौ द्वारों से निकाल कर आँखों के पीछे लाओ, वहाँ मन को ठहरा कर अन्दर अनहद वाणी को पकड़ो और दिन-रात, उठते-बैठते, चलते-फिरते उस वाणी की कमाई करो। वाणी की कमाई करने का भाव है कि सदा उस वाणी की आवाज़ को सुनो, उस वाणी से लिव जोड़ो ताकि तुम्हारा मालिक की भक्ति में मन लग जाये।

जिस वाणी की आप महिमा कर रहे हैं, यह कौन सी वाणी है? यह वह वाणी है जिस वाणी ने संसार की रचना की है, जिस 'वाणी के आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं। गुरु साहिब कहते हैं : 'बाणी वजी चहु जुगी सचो सचु सुणाइ ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ३५) वह वाणी चारों युगों से चली आ रही है। वह वाणी सतयुग में भी थी, त्रेता में भी थी, द्वापर में भी थी, अब भी वही है, भविष्य में भी उसी वाणी को

रहना है। वह वाणी कहाँ है ? आप फ़रमाते हैं : 'अंतरि जोति निरंतरि बाणी साचे साहिब सिउ लिव लाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ६३४) कि हरएक की आँखों के पीछे ज्योति जल रही है। उस ज्योति में से मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली वाणी उठ रही है। जो भाग्यशाली जीव अपने अन्दर उस ज्योति के दर्शन करते हैं, उस वाणी की आवाज़ को पकड़ते हैं, जो युगों-युगों से सबके अन्दर और सारी दुनिया के अन्दर धुनकारें दे रही है, उनका संसार से मोह और प्यार निकल जाता है, उनका परमात्मा से मोह और प्यार पैदा हो जाता है। वह वाणी हम सबका गुरु है। गुरु रामदास जी ने कहा था : 'बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंमृतु सारे ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ९८२)। वह वाणी जो सबके अन्दर आँखों के पीछे दिन-रात धुनकारें दे रही है, उसको 'राम' कह लें 'शब्द' कह लें, 'लोगोस' कह लें, 'कलमा' कह लें, 'राम धुन' कह लें, अथवा उस शब्द, नाम या वाणी का किसी और लफ्ज़ से वर्णन कर लें, कोई फरक नहीं पड़ता। मैंने अर्ज़ की थी कि ये लफ्ज़ हमारे अपने बनाये हुए हैं, वह वाणी, नाम, शब्द, कुन रूपी रचनात्मक शक्ति सच्ची वाणी है, जो हरएक के अन्दर आँखों के पीछे धुनकारें दे रही है। आप किसी भी लफ्ज़ के द्वारा उसको याद कर सकते हैं।

हमें महात्मा की लिखी हुई वाणी भी बड़ी प्यारी लगती है, क्योंकि यह वाणी हमें उस आन्तरिक वाणी के बारे में समझाती है, हमारे मन को कर्मकाण्ड वहमों, भ्रमों और संकल्पों से निकालती है, हमें अपने घर का पता बताती है, घर जाने का शौक और प्यार पैदा करती है, घर जाने का- तरीका और साधन बताती है। इसलिये हमें यह वाणी भी प्यारी लगती है। परन्तु इस वाणी को पढ़ने में ही मुक्ति नहीं है, अपने अन्दर सच्ची वाणी को सुनने में मुक्ति है। आप देखें, जिन मित्रों व प्यारों से हमारा प्रेम होता है, उनके पत्रों से भी हमें कितना प्रेम होता है। मित्र व प्यारे का पत्र आ जाये, हृदय से लगाते हैं, उसे चूम कर रखते हैं, सिराहने रखते हैं, क्योंकि वे प्यारे की याद कराता है। परन्तु पत्र और चीज़ है, प्यारा और चीज़ हैं। पत्र तो प्यारे का स्थान नहीं

ले सकता। इसी प्रकार यह जो वाणी महात्मा ने लिखी है, यह उस प्यारे की याद कराती है, प्यारे से मिलने का तरीका और साधन समझाती है, परन्तु प्यारा कोई और चीज़ है, जो उसकी याद दिलाती है, वह कोई और चीज़ है। गुरु साहिब यहाँ प्यारे का ज़िक्र करते हैं कि वह जो अनहद वाणी है, हरएक के अन्दर आँखों के पीछे धुनकारें दे रही है। उसके साथ ख़याल कब जुड़ेगा ? जब मन को नौ द्वारों से निकाल कर आँखों के पीछे लायेंगे, फिर आप उस वाणी को पकड़ सकेंगे, अपने ख़याल को अन्दर नाम से जोड़ सकेंगे, शब्द से जोड़ सकेंगे।

इसु काइआ अंदरि वसतु असंखा ॥ गुरमुखि साचु मिलै ता वेखा ॥
नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ॥

अब पीछे आपने समझाया था कि तन से मन को निकालना है, अर्थात् ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करना है। अब फिर सवाल पैदा होता है कि तन से मन को किस प्रकार निकालेंगे ? हम सोचते हैं कि हमारा शरीर पाँच-छः फुट लम्बा मिट्टी का पुतला है, यह हाड़, चाम और मांस का बना हुआ है, कि बहुत-से डॉक्टरों ने चीड़-फाड़ की है, किसी को अन्दर कुछ भी दिखाई नहीं दिया। गुरु साहिब प्यार से समझाते हैं कि यह जो शरीर है, केवल हाड़, चाम और मांस का बना हुआ मिट्टी का पुतला ही नहीं है बल्कि इसके अन्दर परमात्मा ने असंख्य वस्तुएँ रखी हुई हैं, असंख्य भण्डार रखे हुए हैं। यहाँ तक कि परमात्मा खुद भी इस शरीर के अन्दर बैठा हुआ है और अपने तक पहुँचने का रास्ता भी परमात्मा ने इस शरीर के अन्दर ही रखा हुआ है। परन्तु उस रास्ते का पता किस प्रकार लगता है ? उस रूहानी सफ़र को तय किस प्रकार कर सकेंगे ? उस लक्ष्य पर, उस मंज़िले-मकसूद पर पहुँच किस प्रकार सकेंगे ? 'गुरमुखि साचु मिलै ता वेखा ॥' कोई मालिक का सच्चा भक्त मिल जाये, वह हमें अन्दर जाने का साधन समझा दे, हम उसके कहने के अनुसार देह और शरीर के अन्दर जा कर खोज करना शुरू कर दें तो हम अन्दर परमात्मा को पा सकते हैं। आप कहते हैं 'नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ॥' भाई, आँखों

के नीचे-नीचे तो इन्द्रियों के भोग हैं, शराबों-कबाबों के स्वाद हैं, परन्तु जो मुक्ति का दरवाज़ा है, वह परमेश्वर ने तुम्हारी आँखों के पीछे रखा हुआ है। उस मुक्ति के द्वार की निशानी क्या है ? 'अनहद सबदु वजावणिआ ॥' हरएक के अन्दर आँखों के पीछे अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है। जब तक कोई आँखों के पीछे आकर अनहद शब्द को नहीं पकड़ता, उसका मुक्ति प्राप्त करने का कभी सवाल ही पैदा नहीं हो सकता।

आप देखें, यदि किसी को किले के अन्दर जाना हो, पर उस किले का द्वार ही न मिले, वह किले में प्रवेश किस प्रकार कर सकेगा ? यदि द्वार मिल जाये, पर द्वार न खुले, फिर भी वह किले में किस प्रकार जा सकेगा ? हमार किला सचखण्ड है और उसका द्वार आँखों के पीछे है। हमें अपने अन्दर उस द्वार की खोज करनी है, उस द्वार को खोलना है ताकि हम अपने किले के अन्दर प्रवेश कर सकें, अपने असली घर वापस जा सकें। इसलिये गुरु साहिब कहते हैं कि जब तक आप आँखों के नीचे-नीचे बैठे हैं, आप इन्द्रियों के भोगों और विषय-विकारों में फँसे हुए हैं। अगर आप मुक्ति के दरवाज़े को ढूँढना चाहते हैं, तो परमात्मा ने वह आपकी आँखों के पीछे लगाया हुआ है। वह किस प्रकार खुलता है ? सुमिरन और ध्यान के द्वारा खुलता है। उसके खुलने के बाद आपको कैसे पता चलेगा कि आप अपने घर के दरवाज़े पर पहुँच गये हैं या किसी गलत जगह पहुँचे हुए हैं। गुरु साहिब कहते हैं, 'अनहद सबदु वजावणिआ ॥' उस मुक्ति के दरवाज़े पर दिन-रात अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है, शब्द की मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़, जो कि मालिक की दरगाह से आ रही है, वह दिन-रात हरएक के अन्दर धुन-कारें दे रही है। वह चोरों के अन्दर भी है, साधू, सन्तों और महात्माओं के अन्दर भी है। वहाँ किसी जाति, किसी धर्म या किसी देश का सवाल ही पैदा नहीं होता। चाहे कोई हिन्दू हो, सिख हो या ईसाई, जो भी आँखों के पीछे ख़याल एकाग्र करेगा वह अपने अन्दर शब्द को सुनना शुरू कर देगा, शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देगा। हज़रत ईसा ने

कहा है, 'खटखटाओ, तो यह खुल जायेगा, ढूँढो तो मिल जायेगा।'

जब भी बाहर से घर के अन्दर जाना हो, हम अच्छी तरह घर के दरवाज़े को खटखटाते हैं। फिर घर का दरवाज़ा खुलता है और हम उसमें प्रवेश कर सकते हैं। हज़रत ईसा का तात्पर्य है कि आपका ख़्याल आँखों से नीचे उतर कर नौ द्वारों के ज़रिये सारे संसार में फैला हुआ है। आप सुमिरन और ध्यान के द्वारा ख़्याल को वापस अपने घर के दरवाज़े पर लायें। फिर दरवाज़े को अच्छी तरह खटखटायें। भाव, बार-बार सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँखों के पीछे ख़याल को टिकायें। जब सुमिरन और ध्यान के द्वारा ख़याल आँखों के पीछे ठहर जायेगा, घर का द्वार खुल जायेगा। फिर क्या होता है? हज़रत ईसा कहते हैं 'ढूँढो और तुम पाओगे।' फिर आपको अन्दर ही घर जाने का रास्ता मिलेगा, जहाँ से आपका रूहानी सफर शुरू होगा और आप अपने लक्ष्य, अपनी मंज़िले-मकसूद पर पहुँच जायेंगे।

हम सब अच्छी तरह समझते हैं कि परमात्मा एक है, वही परमात्मा सबके अन्दर बैठा हुआ है, उस परमात्मा से मिलने का मार्ग भी हरएक के अन्दर एक ही है, फिर किस की अक्ल में आता है कि मालिक ने हिन्दुओं के अन्दर तो अपने मिलने का कोई और मार्ग रखा होगा, सिक्खों-ईसाइयों के अन्दर कोई और मार्ग रखा होगा। जो शरीर के अन्दर जाकर मालिक की खोज करते हैं, उनके लिए तो एक ही रूहानी सफर है, जो हम बाहरमुखी हुए बैठे हैं, कर्मकांड में, ईटों-पत्थरों में उलझे बैठे हैं, अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार भटकते फिर रहे हैं, तड़पते फिर रहे हैं। इसलिए गुरु साहिब ने कहा था, 'गुरमुखि होवै सु काइआ खोजै होर सभ भरमि भुलाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ७५४) जो मालिक के असली आशिक हैं, सच्चे भक्त और प्यारे हैं, वे सदा देह और शरीर के अन्दर जाकर परमात्मा की खोज करते हैं, बाकी सब दुनिया के जीव वहमों और भ्रमों में फँस कर यहीं भूले फिरते हैं। इसलिये गुरु साहिब प्यार से समझाते हैं कि आप शरीर को केवल हाड़, चाम और मांस का पुतला ही न समझें, वह परमात्मा खुद इस शरीर में बैठा हुआ

है और आपको उस तक पहुँचने का मार्ग भी शरीर के अन्दर ही मिलेगा। परन्तु यह मार्ग तब मिलेगा, जब गुरुमुखों के आदेश के अनुसार आँखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा करके अन्दर अनहद शब्द को पकड़ेंगे, अनहद शब्द की कमाई करेंगे।

सचा साहिबु सची नाई ॥ गुर परसादी मंनि वसाई ॥
अनदिनु सदा रहै रंगि राता दरि सचै सोझी पावणिआ ॥
पाप पुंन की सार न जाणी ॥ दूजै लागी भरमि भुलाणी ॥
अगिआनी अंधा मगु न जाणै फिरि फिरि आवण जावणिआ ॥
गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ ॥ हउमै मेरा ठाकि रहाइआ ॥
गुर साखी मिटिआ अंधिआरा बजर कपाट खुलावणिआ ॥
हउमै मारि मंनि वसाइआ ॥ गुर चरणी सदा चितु लाइआ ॥
गुर किरपा ते मनु तनु निरमलु निरमल नामु धिआवणिआ ॥

अब सब-कुछ समझा कर आप फ़रमाते हैं, 'गुर किरपा ते मनु तनु निरमलु।' गुरुमुखों के बताये हुए उपदेश पर चलने से हमारा तन भी निर्मल हो गया, मन भी निर्मल हो गया। तन कब निर्मल होता है ? जब सुमिरन और ध्यान के द्वारा, नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर आँखों के पीछे इकट्ठा कर लेते हैं। मन कब निर्मल होता है ? जब ख़याल को आँखों के पीछे खड़ा करके मन को ब्रह्म, त्रिकुटी अपने ठिकाने पर वापस ले जाते हैं। आत्मा कब निर्मल होती है ? जब आत्मा मन का साथ छोड़ देती है, नंगी हो जाती है और इस पर से सब गन्दे-गन्दे गिलाफ़ उतर जाते हैं। गुरु साहिब समझाते हैं कि गुरुमत पर चलने से, गुरुमुखों के समझाने के अनुसार सुरत-शब्द का अभ्यास करने से, हमने अपना तन भी निर्मल कर लिया, मन भी निर्मल कर लिया, आत्मा भी निर्मल कर ली।

इस समय हमारी क्या दशा है ? हमारी आत्मा मन के अधीन हो चुकी है, मन आगे इन्द्रियों के भोगों का गुलाम बना बैठा है। जो इन्द्रिय चाहती है, मन को अपने घाट पर खींच कर ले आती है। परन्तु सुरत-शब्द का अभ्यास करने से आत्मा मन को वश में कर लेती है, मन

इन्द्रियों और भोगों को वश में कर लेता है, जिससे हमारा तन भी निर्मल हो जाता है, मन भी निर्मल हो जाता है, हमारी आत्मा भी निर्मल हो जाती है।

जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ।। जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ।।

अब फिर गुरु साहिब हमें उस नुक्ते और विषय पर ले आते हैं जहाँ से आपने शब्द शुरू किया था। आपने समझाया था 'करमु होवै।' कि तुम पर मालिक की दया होगी, मेहर होगी, बख़्शिश होगी, तो तुम सुरत-शब्द का अभ्यास कर सकोगे। अब सारे शब्द में समझा कर कि परमात्मा दया किस प्रकार करता है, मेहर और बख़्शिश किस प्रकार करता है, अन्त में उसी नुक्ते पर आ जाते हैं कि 'जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ।। जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ।।' आप कहते हैं, कि हे परमात्मा सबका जन्म-मरण तेरे अपने हाथ में है। जिन पर तू दया करता है, मेहर करता है, बख़्शिश करता है, वे ही सुरत-शब्द का अभ्यास कर तुझ से प्यार करने की, तुझ से विसाल या मिलाप करने की महिमा प्राप्त कर सकते हैं।

नानक नामु धिआइ सदा तूं जंमणु मरणु सवारणिआ ।।

अब सब-कुछ वर्णन करके अन्त में एक ही उपदेश करते हैं 'नानक नामु धिआइ सदा तूं' कि नाम को सदा ध्याना है, नाम को कभी नहीं बिसारना, क्योंकि जो कुछ मिलना है, शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है। श्री गुरु अमरदास जी समझाते हैं कि जब भी जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा होगा, केवल शब्द और नाम की कमाई से होगा। सो हमें भी चाहिये कि संत-महात्माओं के उपदेश से लाभ उठाकर अपनी सुरत को अन्दर शब्द से जोड़ें और उठते-बैठते, चलते-फिरते शब्द की कमाई करें, नाम की कमाई करें।

सतसंग से पहले पढ़े गये शब्द

ऐ सरीरा मेरिआ

ए सरीरा मेरिआ हरि तुम महि जोति रखी ता तू जग महि आइआ ।।
हरि जोति रखी तुधु विचि ता तू जग महि आइआ ।।
हरि आपे माता आपे पिता जिनि जीउ उपाइ जगतु दिखाइआ ।।
गुरपरसादी बुझिआ ता चलतु होआ चलतु नदरी आइआ ।।
कहै नानकु सृसटि का मूलु रचिआ जोति राखी ता तू जग महि आइआ ।।
(आदि ग्रन्थ, पृ. ९२१)

लख खुसीआ पातिसाहीआ

सभे थोक परापते जे आवै इकु हथि ।।
जनमु पदारथु सफलु है जे सचा सबदु कथि ।।
गुर ते महलु परापते जिसु लिखिआ होवै मथि ।।
मेरे मन एकस सिउ चितु लाइ ।।
एकस बिनु सभ धंधु है सभ मिथिआ मोहु माइ ।।
लख खुसीआ पातिसाहीआ जे सतिगुरु नदरि करेइ ।।
निमख एक हरिनामु देइ मेरा मनु तनु सीतलु होइ ।।
जिस कउ पूरबि लिखिआ तिनि सतिगुर चरन गहे ।।
सफल मूरतु सफला घड़ी जितु सचे नालि पिआरु ।।
दूखु संतापु न लगई जिसु हरि का नामु अधारु ।।
बाह पकड़ि गुरि काढिआ सोई उतरिआ पारि ।।
थानु सुहावा पवितु है जिथै संत सभा ।।
ढोई तिस ही नो मिलै जिनि पूरा गुरू लभा ।।
नानक बधा घरु तहा जिथै मिरतु न जनमु जरा ।।
(आदि ग्रन्थ, पृ. ४४)

गुरु का दरस तू देख री

गुरु का दरस तू देख री । तिल आसन डार ।।
शब्द गुरू नित सुनो री । मिल बासन जार ।।
गुरू रूप सुहावन अति लगे । घट भान उजार ।।
कँवल खिलत सुख पावई । भौंरा कर प्यार ।।
गुरु ज्ञान न पाया हे सखी । जिन घट अंधियार ।।
पूरा सतगुरु ना मिला । भरमत भौ जार ।।
मैं तो सतगुरु पाइआ । जाऊँ बलिहार ।।
ज्यों चकोर चन्दा गहे । रहूं रूप निहार ।।
सतगुरु शब्द स्वरूप हैं । रहें अर्श मँझार ।।
तू भी सुरत स्वरूप है । रहो गुरु की लार ।।
नैनन में गुरु रूप है । तू नैन उघार ।।
सरवन में गुरु शब्द है । सुन गगन पुकार ।।
राधास्वामी कह रहे । यह मारग सार ।।
जो जो मानें भाग से । सो उतरें पार ।।

(सार बचन, पृ. ४१-४२)



महाराज चरनसिंह जी
ਮਹਾਰਾਜ ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਜੀ

शब्द सत्संग

गुरु कहें खोल कर भाई । लग शब्द अनाहद जाई ॥
बिन शब्द उपाव न दूजा । काया का छुटे न कूजा ॥
घर में घर गुरु दिखलावें । धुन शब्द पाँच बतलावें ॥
धुन में अब सुरत लगावो । इस घर से उस घर जावो ॥
वह घर है अगम अपारा । दसवें के पार निहारा ॥
दस द्वारा घट चढ़ खोलो । सत शब्द अधर पै तोलो ॥
बिन मेहर गुरू नहिं पावे । बिन शब्द हाथ नहिं आवे ॥
सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी । धुन शब्द सुनो यह करनी ॥
मन चंचल थिर न रहावे । चित निर्मल कस होय आवे ॥
सुर्त शब्द कमाई करना । सब जतन दूर अब धरना ॥
निश्चय दृढ़ इस पर धरना । आलस कर कभी न फिरना ॥
यह सार सार सब गाया । संतन मत भाख सुनाया ॥
राधास्वामी भेद लखाया । सुन मान सार समझाया ॥

(सार बचन, पृ. १६१)

सत्संग

उपदेश सुरत शब्द के अभ्यास का, बचन २० : शब्द १०

गुरू कहे खोल कर भाई । लग शब्द अनाहद जाई ।।

यह श्री हुज़ूर स्वामीजी महाराज की वाणी है। पहले दिन मैंने तुलसी साहिब जी महाराज की वाणी ली थी, कल मैंने गुरु नानक साहिब के घर की वाणी ली थी, आज मैं स्वामीजी महाराज की वाणी ले रहा हूँ। मैंने पहले भी अर्ज़ की थी कि भिन्न-भिन्न महात्माओं की वाणी लेने से मेरा केवल यही भाव है कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, एक ही उपदेश है। मैं हमेशा अर्ज़ करता हूँ कि महात्मा किसी जाति, किसी धर्म, किसी देश या किसी काल में क्यों न आये हों, सभी महात्मा हमें परमात्मा की भक्ति करने का एक ही उपाय समझाते हैं, एक ही साधन समझाते हैं। संसार में कोई भी महात्मा कभी जाति या धर्म बनाने के लिए नहीं आते, न ही कोई महात्मा किसी के हाथ में डण्डे और तलवारें देने के लिये आते हैं। वे हमसे केवल उस परमात्मा की भक्ति करा कर, हमें देह के बन्धनों से मुक्त करके वापस उस परमात्मा से मिलाने के लिये आते हैं। परन्तु आम तौर पर ऐसे मालिक के भक्तों और प्यारों के जाने के बाद हम उनकी असली शिक्षा को, असली उपदेश को बिलकुल भूल जाते हैं। हम बाहरमुखी हो जाते हैं, ईंटों-पत्थरों में फँस जाते हैं और महात्माओं की शिक्षा को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके जातियों, धर्मों और देशों का रूप देने की कोशिश करते हैं और एक-दूसरे से लड़ना-भिड़ना शुरू कर देते हैं। हम ऐसा क्यों करते हैं ? कोई अपने पेट के लिए करता है, कोई अपने आदर और मान-बढ़ाई के लिए करता है। आप देखें, जिन महात्माओं की शिक्षा कुल आलम के लिये है, सारे संसार के लिये है, यदि कोई उनके

उपदेश को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करने की कोशिश करता है, तो इससे अधिक उन मालिक के भक्तों तथा प्यारों के साथ और क्या अन्याय करेगा। उदार हृदय से किसी भी महात्मा की वाणी की खोज करें, यही पता चलेगा कि हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, हर-एक का एक ही उपदेश है।

यहाँ स्वामीजी महाराज समझाते हैं कि यह रचना, यह संसार जो कुछ भी हम आँखों से देख रहे हैं, यह चौरासी लाख जिया-जून का बहुत बड़ा जेलखाना है। इस जेलखाने से निकलने का उस मालिक ने केवल एक ही दरवाज़ा रखा है। वह कौन-सा दरवाज़ा है? वह मनुष्य का चोला है। यह चोला हमें परमात्मा इसलिये देता है कि इससे लाभ उठा कर हम मालिक की भक्ति करें, नाम की कमाई करें ताकि हमारा देह के बन्धनों से, जन्म-मरण के दुःखों से सदा के लिए छुटकारा हो सके। यदि मनुष्य के शरीर में आने का लाभ है तो वह केवल मालिक की भक्ति, मालिक का प्यार है। बेटे-बेटिया हमें हर जामे में मिलते आये हैं, खाना-पीना, ऐश्वर्य हम हर जामे में करते आये हैं। यदि कोई अनोखी चीज़ है, जो हम पिछले किसी जामे में प्राप्त नहीं कर सके, केवल अब ही प्राप्त कर सकते हैं, वह मालिक की भक्ति है, परमात्मा की खोज है, परमात्मा का मिलाप है। इसलिए महात्मा उपदेश देते हैं कि आप सदा अपनी मज़िले-मकसूद को, अपने असली लक्ष्य को आँखों के आगे रखें, अपना रूहानी सफ़र तय करने की कोशिश करें ताकि आपका देह में आने का वास्तविक उद्देश्य पूरा हो सके। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

लख चउरासीह जोनि सबाई ।। माणस कउ प्रभि दीई वडिआई ।।
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा ।।
(आदि ग्रन्थ, पृ० १०७५)

कि यह जो इन्सान का जामा है, मनुष्य का शरीर है, यह सीढ़ी का अंतिम डण्डा है। कोशिश करेंगे तो अपने घर में पहुँच जायेंगे। यदि पाँव फिसल जाता है, सीधे नीचे आ गिरते हैं। यदि मनुष्य-

जन्म में आकर परमात्मा की भक्ति करते हैं, तो वापस जाकर परमात्मा में समा जाते हैं। यदि विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों, इन्द्रियों के भोगों, धर्मों और देशों के झगड़ों में फँसे रहते हैं तो इन सबका परिणाम भुगतने के लिए हरएक को बार-बार इस चौरासी के जेलखाने में आना पड़ता है। इसलिए महात्मा कहते हैं कि हमें इस अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए, मालिक की भक्ति करनी चाहिए। परन्तु हम इतना इन्द्रियों के भोगों में फँस जाते हैं कि और तो और अपनी मृत्यु को भी भूल बैठते हैं। रोज़ देख रहे हैं कि हमारे साथी हमारा साथ छोड़ते जा रहे हैं। एक-एक के साथ जाकर खुद श्मशान-भूमि में छोड़ आते हैं और आँखों से देखते हैं कि जिन शक्लों और पदार्थों के साथ वह इतना मोह और प्यार किया करता था, उनमें से किसी चीज़ ने भी उसका साथ नहीं दिया। परन्तु हमारे मन में यह ख़याल रह जाता है कि शायद वह उन चीज़ों को इकट्ठा करके साथ नहीं ले जा सका, हम ज़रूर इनको इकट्ठा करके साथ ले जायेंगे।

इसलिए हरएक महात्मा हमें ग़फ़लत की नींद से बेदार करता है, चेताता है कि आप उस समय और वक्त को आँखों के आगे रख कर देखें, उस समय कौन आपकी सहायता करता है, कौन आपकी मदद करता है। यह बेटे-बेटियां, रिश्तेदार, यार-दोस्त, बहन-भाई, जिनके लिए हम इतनी-इतनी बेईमानी करते हैं, जीवन के कितने कीमती उसूलों को कुरबान करते हैं, उनको तो यह भी पता नहीं लगता कि मौत के फ़रिश्ते आते किस ओर से हैं और हमें कानों से पकड़ कर ले किस ओर जाते हैं। सिवाय इसके कि हम एक-दूसरे से बिछुड़ने पर रोने पर ज़ोर दे दें, आप देखें, और तो हम किसी की कोई सहायता, कोई मदद नहीं कर सकते। इसलिये महात्मा कहते हैं कि इनसे लेन-देन का सम्बन्ध है, स्वार्थ का प्यार है। कोई स्त्री बन कर आ गई, कोई पति बन कर आ गया, कोई बच्चे बन कर आ गये और कोई यार-दोस्त बन कर आ गये। जितना-जितना किसी से सम्बन्ध होता है, उसके समाप्त होने के बाद सब अपने-अपने रास्ते पर चले जाते हैं। न

ही आज तक किसी के साथ कोई गया है, न कभी किसी के साथ कोई जा सकता है। कई हमें छोड़ कर जा चुके हैं और कइयों को हम छोड़ कर जाने की तैयारी किये बैठे हैं।

एक रंग-मच पर आकर सभी अभिनेता अपना-अपना पार्ट अदा करते हैं—कोई राजा का करता है; कोई रानी का करता है, कोई खलनायक का करता है। परन्तु जब पार्ट खत्म करके रंग-मंच से उतरते हैं, न कोई राजा होता है, न कोई रानी होती है, न ही कोई खलनायक होता है। इस प्रकार यह संसार भी एक बहुत बड़ी स्टेज है। हम यहाँ अपने-अपने कर्मों के अनुसार हिसाब-किताब दे रहे हैं। पर यह हिसाब-किताब चुकाते हुए इतना इनके मोह और प्यार में फँस जाते हैं कि रात को सपने भी हमें इन्हीं के आते हैं और मृत्यु के समय इनकी ही शक्लें सिनेमा के पर्दे के समान हमारी आँखों के आगे आकर खड़ी हो जाती हैं। 'जहां आसा तहां बासा।' जहां हमारा अंतिम समय ख़याल होता है, हम संसार के जीव उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं। इसलिए महात्मा कहते हैं कि संसार में रहो, परन्तु अपने ख़याल को मालिक की भक्ति में रखो, मालिक के प्यार में रखो। महात्मा संसार छोड़ने के लिए नहीं कहते, संसार से मन को निकालने के लिए कहते हैं। वे कहते हैं कि इतना इनके मोह और प्यार में न फँसो कि जिस उद्देश्य के लिए परमात्मा ने मनुष्य का शरीर दिया है, उसको ही भूल जाओ। महात्मा समझाते हैं कि अंतिम समय को अपनी आँखों के आगे रख कर देखो कि उस समय कौन तुम्हारी सहायता करता है, कौन तुम्हारी मदद करता है। परन्तु हम शरीर के अहंकार में ही फँसे रहते हैं और अपनी मृत्यु को बिलकुल भूले रहते हैं।

आप सोच कर देखें, हम देह में बैठ कर अहंकार किस बात का करते हैं, गर्व किस चीज़ का करते हैं? जवानी का अहंकार करते हैं? क्या हमें किसी का बुढ़ापा दिखाई नहीं देता, क्या हमें कभी उस बुढ़ापे की उमर में नहीं पहुँचना है? सुन्दरता और खूबसूरती का मान करते हैं? क्या कभी अस्पतालों में रोगियों की शक्लें नहीं देखीं? पीलिया

हो जाये, चेचक निकल आये, अपना ही मुख शीशे में देखने को मन नहीं करता। क्या हमें धन का अहंकार है ? बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं को, सेठों-साहूकारों को सड़कों पर कंगालों की तरह हमने भटकते देखा है। या हमें हुकूमत या, अधिकार का नशा है ? बड़े-बड़े नेताओं को, जिनको हम मस्तक टेकते थे, उनको लोगों ने गोलियों का शिकार बना दिया। हम देह में बैठ कर अहंकार किस चीज़ का करते हैं ? गर्व किस बात का करते हैं ? स्वामीजी समझाते हैं :

मन रे क्यों गुमान अब करना ।।
तन तो तेरा खाक मिलेगा। चौरासी जा पड़ना ।। (सार बचन, पृ. १२३)

कि आप अहंकार किस चीज़ का करते हैं ? शरीर का ? इसे तो मिट्टी में मिल कर मिट्टी बन जाना है, किसी का अग्नि के सुपुर्द हो जाता है, किसी का मिट्टी के सुपुर्द हो जाता है। मौत के बाद हमें धर्मराज के सामने पेश किया जाता है, जो हमारे कर्मों और इच्छाओं के अनुसार जिस जगह उचित समझेगा, जन्म दे देगा। एक देह के बन्धन से तो किसी का छुटकारा नहीं होता; दूसरा देह का पिंजरा पहले तैयार होता है। उसमें बाद में जाते हैं, मौत पहले ही आँखों के आगे आ कर खड़ी हो जाती है और दस नम्बरियों की तरह हथकड़ी लगी ही रहती है। जिनके कचहरी से रोज़ वारंट ही निकलते रहें, वे अहंकार किस चीज़ का कर सकते हैं, गर्व किस चीज़ का कर सकते हैं ? कबीर साहिब फ़रमाते हैं :

माटी कहे कुम्हार से, क्या रूँदे तू मोहि ।
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं रूँदूँगी तोहि ।।

कुम्हार मिट्टी गूँध-गूँध कर बर्तन बनाता है परन्तु मिट्टी कहती है कि कभी उस समय के बारे में भी थोड़ा सोच-विचार करें; जब मैं भी तुझे अपने अन्दर गूंध लूँगी, अपने अन्दर समा लूंगी। फिर कबीर साहिब कहते हैं :

लकड़ी कहे लुहार को, क्या जारे तू मोहि ।
इक दिन ऐसा आयेगा, मैं जारूँगी तोहि ।।

लुहार लकड़ी को जला कर कोयले बनाता है, परन्तु लकड़ी कहती है कि कभी उस समय के बारे में भी सोच-विचार किया है, जब मैं तुझे अपने साथ लेकर तेरे भी कोयले बना दूँगी । हम सोचते हैं कि मौत तो शायद दूसरे लोगों के लिये ही है, हमारे लिए शराबों-कबाबों के स्वाद हैं, बेटे-बेटियों के प्यार हैं, कौमों-मज़हबों के झगड़े हैं । महात्मा हमें गफ़लत की नींद से बेदार करते हैं कि किस उद्देश्य के लिए यहाँ आये थे और किस प्रकार तुम इन शक्लों और पदार्थों के मोह में फँस कर रात-दिन भटकते फिरते हो, रात-दिन तड़पते फिरते हो । स्वामीजी महाराज कहते हैं :

धाम अपने चलो भाई । पराये देश क्यों रहना ।।
काम अपना करो जाई । पराये काम नहिं फँसना ।।
नाम गुरु का सम्हाले चल । यही है दाम गँठ बँधना ।।

(सार बचन, पृ० १५२)

महात्मा समझाते हैं कि यह देश तुम्हारा देश नहीं है, यह जाति, तुम्हारी जाति नहीं है, यह धर्म तुम्हारा धर्म नहीं है । तुम्हारी जाति सतनाम है, तुम्हारा देश सचखण्ड है । तुम परदेसियों के समान इस संसार में मारे-मारे फिर रहे हो, भटकते फिर रहे हो । जिस प्रकार एक छोटे-से बच्चे को चुराकर, बहका कर, कोई लन्दन ले जाता है । वहीं पर वह शिक्षा प्राप्त करता है, शादी कर लेता है, वहाँ पर ही बाल-बच्चे हो जाते हैं । वह उस देश को ही अपना देश समझना शुरू कर देता है, उन लोगों को ही माता-पिता, भाई-बहन, समझना शुरू कर देता है । परन्तु जब कोई उसके अपने देश का वासी वहाँ आता है, जो उस देश की बोली समझता है । वह उसकी बोली और रहन-सहन को अपना कर उससे मित्रता करके उसे समझाने की कोशिश करता है कि देख, ये तेरे माता-पिता नहीं हैं, ये तेरे बहन-भाई नहीं हैं, यह तुम्हारा देश नही हैं । धीरे-धीरे उसके ज़रिये उसमें देश-भक्ति जाग उठती है, माता-पिता का प्रेम जाग उठता है और वह उसके समझाने के अनुसार अपने देश वापस आ जाता है । इसी प्रकार सन्त-महात्मा यहाँ

आकर, हमारे जैसे बनकर हमारी बोली में हमें समझाते हैं कि यह जाति, तुम्हारी जाति नहीं है, यह देश तुम्हारा देश नहीं है तुम व्यर्थ ही इनके मोह और प्यार में फँस कर भटक रहे हो, और इनमें सुख और शान्ति ढूँढने के लिये रात-दिन तड़पते फिरते हो। गुरु नानक साहिब कहते हैं: 'जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घरि आउ ॥' (आदि ग्रन्थ, ६७८) कि जिस परमात्मा ने तुम्हें इस संसार में भेजा है, उसी परमात्मा ने मुझे तुम्हें वापस बुलाने के लिये भेजा है। तुम मेरे साथ आओ, मैं तुम्हें तुम्हारे घर ले चलूँ। सो महात्मा तो केवल हमारे अन्दर उस मालिक से मिलने का शौक पैदा करते हैं, प्यार पैदा करते हैं।

जितना भी हमारा इस संसार से सम्बन्ध और ताल्लुक है, केवल इस शरीर के कारण है। परन्तु यह शरीर तो काल का पिंजरा है, किराये का मकान है, पराया मकान है, किसी को पचास-साठ वर्ष के लिये मिलता है, किसी को सत्तर-अस्सी वर्ष के लिए मिलता है। जितने साँस मालिक ने बख्शे हैं, भुगतने के बाद सबने शरीर को यहीं छोड़ जाना है। न आज तक कभी किसी का शरीर साथ गया है, न कभी किसी का शरीर साथ जा ही सकता है। किसी का अग्नि के सुपुर्द हो जायेगा, किसी का मिट्टी के सुपुर्द हो जायेगा। इसलिए महात्मा कहते हैं कि आप देह में बैठ कर कौन-सी वस्तु का अहंकार करते हैं, कौन-सी चीज़ का मान करते हैं? अच्छी तरह सोच कर देखें कि कौन-सी चीज़ आपके साथ जायेगी? जब आपकी अपनी देह ही अपनी नहीं बनती तो और लोगों की देहें, लोगों के शरीर तुम्हारे अपने किस प्रकार बन सकते हैं?

स्वामीजी महाराज बहुत सुन्दर उदाहरण देते हैं कि एक मशक में हवा भरी हुई है। जितनी देर उसमें हवा भरी रहती है, वह मशक हमें पानी पर तैरती नज़र आती है, हम भी उस मशक का सहारा ले कर पानी को पार करते हैं, पानी पर तैरते हैं। जब मशक में मे हवा निकल जाती है, वह पानी की तह में बैठ जाती है। जो उसका आसरा

लेकर पानी को पार करने की कोशिश करते हैं, वे भी गोते खाने शुरू कर देते हैं। इस प्रकार यह जो शरीर है, यह भी मशक के समान है। जब तक इसमें सांसों की हवा भरी रहती है, हम किस प्रकार दुनिया के काम-काज में लगे हुए हैं, परन्तु जब सांसों की हवा समाप्त हो जाती है, तो हमारी हस्ती ही समाप्त हो जाती है। जो हमसे मोह और प्यार करके ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं, वे भी घबरा जाते हैं, रोना-पीटना शुरू कर देते हैं। सो स्वामी जी कहते हैं कि इस मशक में से एक दिन हवा ज़रूर निकल जायेगी। पचास वर्ष के बाद निकल जाये, साठ-सत्तर वर्ष के बाद निकल जाये। इसलिये जिस समय तक सासों का भण्डार जारी है, जब तक परमात्मा ने देह में बैठने का अवसर दिया है, अपने असली घर की खोज कर लेनी चाहिये, मालिक की भक्ति कर लेनी चाहिये, मालिक से प्यार कर लेना चाहिये।

हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, हम उस सतनाम समुद्र की बूंदें हैं, परन्तु उस मालिक से बिछुड़ कर इस माया के जाल में फँसे हुए हैं। इस जगह आकर हमारी आत्मा ने मन का साथ ले लिया है। मन इन्द्रियों के भोगों, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों, दुनिया के धन्धों का आशिक है। जो-जो कर्म हम मन के अधीन होकर करते हैं—अच्छे भी करते हैं, बुरे भी करते हैं, उन सभी का परिणाम साथ-साथ हमारी आत्मा को भी देना पड़ता है। स्वामीजी महाराज कहते हैं: 'करम जो जो करेगा तू। वही फिर भोगना भरना॥' (सार बचन, पृ० १४३)। अच्छे कर्म करोगे तो अच्छा परिणाम भुगतने के लिये आ जाओगे। बुरे कर्म करोगे, तो बुरा परिणाम पाने के लिये आ जाओगे। न अच्छे कर्मों के कारण कोई देह के बन्धनों से छुटकारा पा सकता है और न ही कोई बुरे कर्मों के द्वारा जन्म-मरण के दुःखों से बच सकता है। यदि नेक कर्म करते हैं, क्या परिणाम होता है? सेठ-साहूकार बन जाते हैं, राजा-महाराजा बन जाते हैं, जातियों, धर्मों और देशों का शासन प्राप्त करके आ जाते हैं। लोहे की ज़ंजीरें उतरती हैं, सोने की बेड़ियाँ पड़ जाती हैं। 'सी' श्रेणी मे निकलकर 'ए' श्रेणी प्राप्त कर लेते हैं। हाथ

से झाड़ू निकल जायेगा, शासन की बागडोर मिल जायेगी । झोंपड़ी से बिस्तर उठायेंगे, महलों में जाकर बिछा लेंगे । अधिक से अधि बैंकुण्ठों और स्वर्गों तक पहुँच जायेंगे । वे भी भोग-योनियां हैं, निश्चि अवधि के लिये हैं । इसके बाद हमारे लिये नरक और चौरासी तैय ही रहते हैं । क्या राजा, क्या प्रजा, क्या अमीर, क्या गरीब, क्या स्त्र क्या पुरुष, संसार के सभी जीव यहाँ आकर अपने-अपने कर्मों हिसाब-किताब दे रहे हैं । इन कर्मों के कारण, जिस जगह भी जाव कोई जन्म लेता है, उसी शरीर में दुःख और मुसीबतें सहनी पड़ती किसी चोले में कभी कोई सुख प्राप्त नहीं कर सकता, कभी कोई शा प्राप्त नहीं कर सकता ।

सोचकर देखें, रोज़ हमारे पेट के लिये हज़ारों प्रकार के जान मारे जाते हैं । किस प्रकार उनके रोने-पीटने, चीखने-चिल्लाने पर हम उनकी गर्दनों पर छुरियाँ चलाते हैं । हमने कभी मन में विच किया है कि यदि अपने कर्मों के कारण हमें वहां जाकर जन्म लेना जाये, उनके हाथों में छुरियाँ और कुल्हाड़ियां हों और हमारी ग उनके नीचे हो तो हमारी क्या दुर्दशा होगी, हमारी क्या हालत होगी एक डॉक्टर पतली-सी सुई, टीका लगाने के लिये गर्म करता है, हमा इतनी बड़ी देह थर-थर काँपना शुरू कर देती है । परन्तु उन ग़रं जानवरों पर, बेज़बानों पर किस निर्दयता के साथ हमारे पेट ख़ातिर छुरियाँ चल रही हैं । दूसरे जामों की दशा का तो क्या व किया जाये, आप मनुष्य के जामे को देखें । जिसको हम 'टाप आफ़ क्रिएशन' या 'सृष्टि का सिरमौर' कहते हैं, 'अश्रुफुल मख़लूकात' कर याद करते हैं, जिसको ऋषियों-मुनियों ने 'नर-नारायणी देह' कर याद किया है, इस शरीर में बैठकर कोई कौन-सा सुख प्र कर सकता है । कोई ग़रीब बीमारी के हाथों तंग आया बैठा है, बे-रोज़गारी के हाथों दुःखी हो जाता है । जिनके सन्तान नहीं होती बेचारे तड़प रहे हैं, किसी को सन्तान ने दुःखी किया हुआ है । कि को कर्ज़ लेना है, किसी को कर्ज़ देना है । सर्दी में आप सड़कों

जाकर कंगालों की दशा देखें, जेलखानों में जाकर कैदियों की कहानियाँ सुनकर देखें, अस्पतालों में कभी रोगियों की चीखें सुनें। अखबार पढ़ कर देख लें, रेडियो सुनकर देख लें, किस प्रकार जातियों, धर्मों और देशों के झगड़े शुरू हैं। कितने गरीबों का खून होता है, कितनी स्त्रियाँ विधवा होती हैं, कितने बच्चे अनाथ होते हैं। जिस नगरी में यह हालत है कि रोटी-कपड़े के लिये तड़पते फिरते हैं, उस जामे में बैठकर कोई सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकता है, शान्ति किस प्रकार प्राप्त कर सकता है ? गुरु अमरदास जी कहते हैं : 'पिर सचे ते सदा सुहागणि ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ७५४) कि हमारी आत्मा स्त्री है, वह परमात्मा इसका पति है। जब तक यह आत्मा रूपी स्त्री परमात्मा रूपी पति के चरणों में नहीं पहुँचती, इसका कभी भी जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा नहीं हो सकता।

सन्तों-महात्माओं ने आत्मा और परमात्मा के रिश्ते को स्त्री और पति का रिश्ता कहकर वर्णन किया है। स्वामीजी महाराज कहते हैं : 'सुरत सुन बात री। तेरा धनी बसे आकाश ॥' (सार बचन, १४५)

क्योंकि आत्मा और परमात्मा में भक्ति का सम्बन्ध है, प्रेम का सम्बन्ध है, प्यार का सम्बन्ध है। कल मैं खोल कर अर्ज़ कर चुका हूँ कि यह कोई जात-पात का रिश्ता नहीं है, यह कोई राष्ट्र, धर्म और देश का रिश्ता नहीं है। यह केवल इश्क, प्रेम और प्यार का रिश्ता है। इसलिये महात्मा इसको स्त्री और पति का रिश्ता कहकर याद करते हैं। रामकृष्ण मिशन वाले इसको माता और बेटे का रिश्ता कह कर याद करते हैं। हज़रत ईसा ने इसको बाप और बेटे का सम्बन्ध कहकर याद किया है। इन सभी रिश्तों में एक ही वस्तु समान है— वह भक्ति है, प्रेम है, प्यार है। यही कारण है कि हरएक महात्मा हमारी आत्मा में उस मालिक से मिलने का इश्क पैदा करता है, मालिक से मिलने का प्यार पैदा करता है।

अब हम संसार के जीव अपनी-अपनी समझ के अनुसार हज़ारों युक्तियों और तरीकों से परमात्मा को ढूंढने की कोशिश करते हैं।

आप देखें, हम जप-तप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, पुण्य-दान करते हैं, घर-बार छोड़कर जंगलों-पहाड़ों में छिपकर बैठ जाते हैं, सरोवरों में स्नान करते हैं, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़ते हैं, भभूत लगाते हैं, कान फड़वाते हैं—ये सभी साधन, सभी तरीके हम केवल एक परमात्मा से मिलने के लिये ही करते हैं। परन्तु यहाँ स्वामीजी महाराज प्यार से समझाते हैं कि भाई, मालिक से मिलने का केवल एक ही तरीका है। वह कौन-सा तरीका है ? 'लग शब्द अनाहद जाई ॥' कि अपने अन्तर में सुरत को अनहद शब्द से जोड़ें। जब तक आप अन्तर में अनहद शब्द को नहीं पकड़ते, आप में से किसी का भी कभी मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

बाबा जगु फाथा महा जालि ॥
गुरपरसादी उबरे सचा नामु समालि ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ० १००९)

कि यदि गुरुमुखों के उपदेश पर चलकर सच्चे नाम और सच्चे शब्द की कमाई में लग जायेंगे तो आप इस भवसागर से सदा के लिये पार हो जायेंगे। इसलिये महात्मा हमारे अन्दर उस शब्द की कमाई करने का प्यार पैदा करते हैं, नाम की कमाई करने का शौक पैदा करते हैं।

शब्द और नाम की कमाई करने का क्या मतलब है ? महात्मा समझाते हैं कि शब्द या नाम दो प्रकार का है। एक वर्णात्मक शब्द है, दूसरा धुनात्मक शब्द है। वर्णात्मक शब्द, महात्मा उनको कहते हैं जो हमारे लिखने में आते हैं, पढ़ने में आते हैं, बोलने में आते हैं। ये जितने भी हमने अपने-अपने प्यार में आकर परमात्मा के नाम रखे हैं—अल्लाह, वाहिगुरु, हरिओम, राधास्वामी, परमात्मा, परमेश्वर, आदि—ये सभी हमारे लिखने में आते हैं, पढ़ने में आते हैं, बोलने में आते हैं। पहले तो हमारे कितने ही देश हैं, प्रत्येक देश में कितनी-कितनी भाषाएँ हैं और प्रत्येक भाषा में महात्माओं ने परमात्मा को कितने नामों से याद किया है। अभी हजारों और अनेक महात्माओं को संसार में आना है

और हज़ारों और अनेक लफ्ज़ों से उस परमात्मा को याद करना है। पिछले महात्माओं द्वारा रखे हुए परमात्मा के नाम हम भूलते जा रहे हैं, आगे प्यार में आकर परमात्मा के नाम रखते चले जा रहे हैं। जिस प्रकार माता अपने बच्चे को प्यार से कई लफ्ज़ों द्वारा याद करती है, परन्तु माता का बच्चे से जो रिश्ता है, वह लफ्ज़ों का रिश्ता नहीं है, भक्ति और प्यार का रिश्ता है। माँ किसी भी लफ्ज़ से अपने बच्चे को याद कर सकती है, लफ्ज़ तो माँ के प्यार को प्रकट करते हैं। इसी प्रकार मालिक के भक्तों और प्यारों का परमात्मा से जो रिश्ता है, वह कोई लफ्ज़ों का रिश्ता नहीं, भक्ति का रिश्ता है, प्यार का रिश्ता है। ये लफ्ज़ तो महात्मा के प्यार को प्रकट करते हैं, ज़ाहिर करते हैं। वह जो रिश्ता है, वह सच्चे प्यार का रिश्ता है, सच्चे शब्द का, सच्चे नाम का रिश्ता है जो न आँखों से देखा जा सकता है, न कानों से सुना जा सकता है और न जिसका ज़बान से वर्णन किया जा सकता है। जिसको हुज़ूर महाराज जी 'अनरिटन लॉ, अनस्पोकन लेंग्वेज़' (अलिखित कानून, अबोली भाषा) कहकर याद किया करते थे। हज़रत ईसा समझाते हैं: 'आँखें होने पर भी तुम उसको देख नहीं सकते, कान होने पर भी तुम उसको सुन नहीं सकते'। यही गुरु साहिब वाणी में लिखते हैं:

अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ० १३९)

कि आप उस शब्द या नाम या हुकम को पकड़ कर अपने ख़सम या परमात्मा से मिलोगे, जिसको न तो आपकी आँखें देखती हैं, जिसका न आपकी ज़बान वर्णन कर सकती है, न कान सुन सकते हैं। वहाँ न किसी के हाथ लेकर पहुँचते हैं, न किसी के पैर लेकर पहुँचते हैं और जिस चीज़ को हम सब जीते-जी मर कर प्राप्त कर सकते हैं। जीते-जी मरने का मतलब है जो नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर आँखों के

पीछे लाकर प्राप्त कर सकते हैं। हमारे शरीर में जो आत्मा और मन का स्थान है—जिसको कोई 'शिवनेत्र' कहता है, कोई 'दिव्यचक्षु' कहता है, 'कोई घर-दर' कहता है, कोई 'मुक्ति का दरवाज़ा' कहता है—वह स्थान हरएक की आँखों के पीछे है । इस स्थान से सबका ख़याल उतरता है । नौ द्वार हैं—दो आँखें, दो कान के सुराख, दो नाक के सुराख, एक मुंह और नीचे दो इन्द्रियों के सुराख । इन नौ द्वारों के ज़रिये हमारा ख़याल सारे संसार में फैल जाता है। यहाँ बैठे हुए कभी बाल-बच्चों का ख़याल आता है, कभी घर के कारोबार का ख़याल आता है, कभी दुकान के ग्राहकों का ख़याल आता है । मन कभी किसी का निचला नहीं बैठता । कितनी ही अँधेरी कोठरियों में अपने-आप को बन्द क्यों न कर लें, आप वहाँ नहीं होंगे, आपका मन सारी दुनिया में फैला हुआ होगा ।

हमें गुरुमुखों के समझाने के अनुसार सुमिरन और ध्यान के द्वारा, इस फैले हुए ख़याल को वापस लाकर आँखों के पीछे इकट्ठा करना है । जब आँखों के पीछे ख़याल इकट्ठा करते हैं, स्वामीजी महाराज कहते हैं कि हमें अपने-आप अन्तर में समझ आ जाती है कि वह मीठी से मीठी तथा सुरीली से सुरीली आवाज़, जो मालिक की दरगाह से आ रही है, वह चोरों में भी है, ठगों में भी है, साधू, सन्तों, महात्माओं में भी है । वहाँ पर किसी जाति का, धर्म का, देश का सवाल ही नहीं उठ सकता । आप हिन्दू होकर अन्दर जायें, सिक्ख या ईसाई होकर अन्दर जायें, जो भाग्यवान, खुशकिस्मत ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करता है, वह अपने अन्दर उस शब्द की आवाज़ को सुनना शुरू कर देता है, शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देता है । हमारी आत्मा की देखने की शक्ति को स्वामी जी 'निरत' कहते हैं । इसकी सुनने की शक्ति को आप 'सुरत' कहते हैं । आँखों के पीछे आकर सुरत शब्द की आवाज़ को सुनना शुरू कर देती है और निरत शब्द के प्रकाश को देखना शुरू कर देती है । हम उस आवाज़ के द्वारा घर की दिशा निश्चित कर लेते हैं, उस प्रकाश के द्वारा अपना रूहानी सफ़र तय

करना शुरू कर देते हैं।

उदाहरण के लिये यदि आप शाम को अपनी बस्ती से सैर करते-करते नदी के किनारे कहीं बहुत दूर निकल जायें, रात हो जाये, अँधेरा हो जाये, आपको पता न लगे कि किस ओर आप बस्ती छोड़ आये हैं, तो आप वापस घर आने के लिए क्या करेंगे ? आप ध्यान से सुनेंगे, बस्ती की ओर से कोई न कोई आवाज़ आती हो। रेडियो की या किसी टेप-रिकार्ड की आवाज़ आती हो। उस आवाज़ के द्वारा आप एकदम अपने घर की दिशा निश्चित कर लेंगे कि आपका घर अगली ओर है या पिछली ओर है, बायीं ओर है या दायीं ओर है। जिस समय आपको घर की दिशा का पता लग जाता है, क्योंकि मार्ग में ऊँची-नीची ज़मीन है, गड्ढे, टीले, झाड़ियां हैं, अगर आपके हाथ में टार्च अथवा लैम्प हो, आप उससे रास्ता देखते-देखते भूले हुए फिर अपने घर वापस आ जाते हैं। कौन-सी चीज़ आपको अपने घर वापस लाई ? वह आवाज़ लाई, वह प्रकाश लाया।

स्वामीजी महाराज कहते हैं कि इसी प्रकार उस परमात्मा ने हरएक के अन्दर आवाज़ रक्खी हुई है, प्रकाश भी रखा हुआ है। हमें आँखों के पीछे आकर अन्तर में उस शब्द की आवाज़ को पकड़ना है, उस शब्द के प्रकाश को देखना है। उस आवाज़ के द्वारा अपने अन्दर घर की दिशा कायम करनी है, प्रकाश के द्वारा अन्दर रूहानी सफ़र तय करना शुरू कर देना है और मंज़िल-दर-मंज़िल अपने घर की ओर वापस आ जाना है। गुरु साहिब कहते हैं : 'अंतरि जोति निरतंरि वाणी साचे साहिब सिउ लिव लाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ६३४) कि तुम्हारे सबके अन्दर आँखों के पीछे ज्योति जल रही है, उस ज्योति के अन्दर से मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज़ पैदा हो रही है। जो भाग्यवान् आँखों के पीछे खयाल को इकट्ठा करके उस ज्योति के दर्शन करते हैं, उस वाणी अथवा आवाज़ को सुनते हैं, 'साचे साहिब सिउ लिव लाई', उनका संसार में से मोह और प्यार निकल जाता है, उनका परमात्मा से मोह और प्यार पैदा हो जाता है। इसी वाणी

को महात्मा सच्चा शब्द और सच्चा नाम कहकर याद करते हैं।

ये जो हमारे शब्द हैं, आप इन सबका इतिहास लिख सकते है समय निश्चित कर सकते हैं। स्वामीजी महाराज को आये केवल स वर्ष हुए हैं, जिनके जाने के बाद हमने कुल मालिक को 'राधास्वामी कहकर याद करना शुरू कर दिया। गुरु नानक साहिब को आ पांच सौ वर्ष हुए हैं, जिनके जाने के बाद हम 'वाहिगुरु' कहने लगे मुहम्मद साहिब को आये तेरह-चौदह सौ वर्ष हुए हैं, जिनके जाने बाद हम 'अल्लाह-अल्लाह' कहने लगे। श्री रामचन्द्र जी महाराज क आये हुए इससे भी अधिक समय हुआ है जिनके जाने के बाद हम 'राम-राम' कहना शुरू कर दिया। आप प्रत्येक लफ्ज़ की अवधि निश्चित कर सकते हैं, परन्तु जिस सच्चे शब्द और नाम की महात्म महिमा करते हैं, उसने तो संसार की रचना की है, उसके आधार प सब खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं :

सबदे धरती सबदे अकास। सबदे सबद भया परगास।।
सगली सृसटि सबद के पाछे। नानक सबद घटे घटि आछे।।
(प्राण संगली)

उस शब्द ने धरती पैदा की है, सूर्य पैदा किया है, चन्द्र पैदा किय है, उस शब्द ने सारे संसार की रचना की है और वह शब्द सबके अन्दर घट-घट में रात-दिन धुनकारें दे रहा है। जिस चीज़ ने सा संसार की रचना की है, जिसके आधार पर खण्ड-ब्रह्माण्ड खड़े हैं, उ शक्ति की अवधि कौन निश्चित कर सकता है, वह शक्ति लिखने पढ़ने और बोलने में किस प्रकार आ सकती है ? ये लफ्ज़ हमारे साध हैं, वह शक्ति हमारा लक्ष्य अथवा मंज़िल है। हमें लफ्ज़ों के सा प्यार पैदा करके जातियों, धर्मों व देशों के झगड़े नहीं खड़े करने हमें तो इन लफ्ज़ों के द्वारा अन्तर में उस शब्द की खोज करनी है उस नाम की खोज करनी है जो शब्द और नाम सबके अन्दर है।

ये जितने भी हमारे धर्म हैं, इन सबके रीति-रिवाज़ अलग-अल हैं, क्योंकि ये सब हमारे अपने पैदा किए हुए हैं, परन्तु जो सच्च

रूहानियत है, असलियत है, हकीकत है, वह हर धर्म की तह में एक ही चीज़ है। उस रूहानियत को भिन्न-भिन्न महात्माओं ने भिन्न-भिन्न लफ्ज़ों से याद किया है। स्वामीजी महाराज उसे 'अनहद शब्द', 'मूल कलाम', 'शब्द', 'नाम', 'निर्मल नाद' आदि कहकर याद करते हैं। मुसलमान फकीरों ने उसे 'कलमा', 'बांगे-आसमानी', 'कलामे-इलाही', 'निदाए सुलतानी' आदि कई लफ्ज़ों से पुकारा है। गुरु नानक साहिब उसको 'गुरु की वाणी', 'सच्ची वाणी', 'अमर', 'अकथ कथा', 'हुकम', 'हरि कीर्तन' आदि कह देते हैं। हज़रत ईसा ने उसको 'वर्ड' या 'लोगोस' कह दिया है। ऋषियों-मुनियों ने उसे 'आकाशवाणी', 'राम नाम', 'राम धुन', 'निर्मल नाद', 'दिव्य ध्वनि' आदि कहकर याद किया है। चीनी महात्माओं ने उसे 'ताउ' कह दिया है। हमें लफ्ज़ों के वाद-विवाद में कभी नहीं उलझना चाहिए, हमें तो अपने शरीर के अन्दर उस नुक्ते या बिन्दु पर ख़याल को एकाग्र करना है, जहां पर दाता दात दे रहा है, नाम रूपी अमृत बरस रहा है। महात्मा कहते हैं कि सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा करो, यह तुम्हारे घर का दरवाज़ा है, इस घर के दरवाज़े को खोलो। तब तुमको अपने घर जाने का रास्ता मिलेगा, जिस रास्ते पर चलकर अपनी मंज़िले-मकसूद पर पहुँच सकते हो। वह कौन-सा घर अथवा मार्ग है? वह शब्द की कमाई है, नाम की कमाई है। स्वामीजी दावे से कहते हैं कि 'लग शब्द अनाहद जाई।' भाई, अगर तू मुक्ति प्राप्त करना चाहता है, जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा चाहता है तो अपने ख़याल को उस सच्चे नाम से जोड़, सच्चे शब्द से जोड़।

ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों में महात्मा केवल उस सच्चे शब्द और सच्चे नाम की महिमा लिख देते हैं। इनको पढ़ने से नाम की कमाई करने का तरीका अथवा साधन का पता लग जाएगा, नाम की कमाई का शौक और प्यार पैदा हो जाएगा, परन्तु आपका ख़याल शब्द या नाम के साथ नहीं जुड़ेगा। सत्संग में हम शब्द की चर्चा कर रहे हैं, शब्द का ज़िकर कर रहे हैं, लेकिन सत्संग सुन लेने से तो किसी का

ख़याल नाम के साथ नहीं जुड़ता। जो कुछ हम सुनते हैं, उस पर अमल करने से ही हमारा ख़याल नाम से जुड़ता है। डाक्टरों की पुस्तकों में हर प्रकार की बीमारी के नुस्खे लिखे हुए होते हैं, पर दवाई तो डाक्टर की अलमारी में होती है। अगर कोई बीमार सारा दिन डाक्टर की पुस्तकें लेकर पढ़ता रहेगा, वह जितनी इच्छा पढ़ता रहे, पढ़वाता रहे उसको बीमारी से तो कभी आराम नहीं आ सकता। जब तक डाक्टर के पास जाकर, दवाई लेकर, शरीर में नहीं डालता, डाक्टर का बताया हुआ परहेज़ नहीं करता, उसके शरीर से बीमारी किस प्रकार दूर हो सकती है? आप सारा दिन भोजन बनाने की पुस्तक पढ़ते रहें, पढ़वाते रहें, न आपका पेट भरेगा, न ही आपको स्वाद आयेगा। आप सारा दिन रेलवे का टाईम-टेबल खोलते रहें, पढ़ते रहें, पढ़वाते रहें, आप घर में ही बैठे रहेंगे, आपका सफ़र कभी तय नहीं हो सकेगा। ग्रन्थों-पोथियों को पढ़ना ज़रूरी है, परन्तु पढ़ने के बाद हमारा कर्तव्य समाप्त नहीं होता, बल्कि जो कुछ हमने पढ़ा है उस पर अमल भी करना है। अमल किस प्रकार करना है? 'लग शब्द अनाहद जाई।' हमें सुमिरन और ध्यान के द्वारा ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा करके अन्दर अनहद शब्द का स्वाद प्राप्त करना है, उस नाम का स्वाद प्राप्त करना है। कल गुरु नानक साहिब के शब्द में आया था :

नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ० ११०)

गुरु साहिब ने समझाया था कि आँखों के नीचे-नीचे इन्द्रियों के भोग हैं, विषय-विकारों के स्वाद हैं। परन्तु मुक्ति का दरवाज़ा मालिक ने आंखों के पीछे रखा है, जिसकी एक निशानी भी रखी है। वह निशानी क्या है? 'अनहद सबदु वजावणिआ ॥' उस स्थान पर हरएक के अन्दर अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है। जब तक हमारी सुरत आँखों के पीछे आकर उस अनहद शब्द को नहीं पकड़ती, तब तक हमारा किसी का भी मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ न

वसतु लहै न चूकै फेरा ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. १२४) उस शब्द और नाम की कमाई के बिना न तो किसी के अन्दर से अज्ञानता का अँधेरा दूर होता है, न किसी को परमात्मा मिलता है तथा न ही किसी का देह के बन्धनों से छुटकारा होता है। जो कुछ भी प्राप्त होना है, उस शब्द और नाम की कमाई से ही मिलना है। कबीर साहिब कहते हैं :

यह तन है कागद की पुड़िया, बूँद पड़त गल जाओगे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, इक नाम बिना पछताओगे ॥

जब आप कागज़ की पुड़िया पर पानी डालते हैं, कागज़ गल जाता है। इसी प्रकार यह जो देह है, इसे भी अग्नि के सुपुर्द होकर ज़ल जाना है, मिट्टी के सुपुर्द होकर गल जाना है। यदि इस देह में बैठकर अपने ख़याल को शब्द और नाम से नहीं जोड़ेंगे, कबीर साहिब कहते हैं कि हमें अन्त में मृत्यु के समय पछताना पड़ेगा कि अपने बहुमूल्य समय को व्यर्थ की बातों में फँस कर बर्बाद कर दिया। क्यों पछताना पड़ता है ? क्योंकि बार-बार जन्म-मरण के दुःखों में आना पड़ता है। कबीर साहिब वाणी में नाम की यहाँ तक महिमा करते हैं :

नाम जपत कुष्टी भला, चुइ चुइ पड़े जिस चाम।
कंचन देह केहि काम की, जा मुख नाहीं नाम ॥

यदि कोई कोढ़ी शब्द और नाम की कमाई में लगा हुआ है, वह लाख दरजे उस मनुष्य से अच्छा है जो सोने की देह, भाव संसार के सब हार-श्रृंगार लिये बैठा है लेकिन नाम को भूले बैठा है, क्योंकि जो कुछ मिलना है, वह शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है। इसलिए महात्मा हमारे अन्दर शब्द और नाम की कमाई करने का शौक पैदा करते हैं।

यह शब्द और नाम भी कहीं बाहर नहीं है। यह सबके शरीर के अन्दर है। गुरु अमरदास साहिब कहते हैं :

सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ॥
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुख पाए ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ. १२४)

कि जो लोग देह और शरीर के बाहर उस नाम रूपी वस्तु को ढूंढने का प्रयत्न करते हैं, वे तो बेगारियों की तरह अपने बहुमूल्य समय को नष्ट कर रहे हैं। बेगारी कौन होते हैं ? जो सारा दिन मेहनत करते हैं, थक कर चूर हो जाते हैं, खून-पसीना भी एक कर देते हैं परन्तु जिनके हाथ या पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता। देख लें, अगर कोई चीज़ हमारे घर में खो जाये, हम घर के अन्दर जाकर खोज करेंगे, तभी हम उस वस्तु को पा सकेंगे। अगर हम उसको मन्दिरों, गुरुद्वारों या गिरजों में, जंगलों-पहाड़ों में, हिमालय में खोज करने लगें, हम उस वस्तु को पा कैसे सकते हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं: 'घरि रतन लाल बहु माणक लादे मनु भ्रमिआ लहि न सकाईऐ ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. ११७९) हमारे घर अर्थात् शरीर में परमात्मा ने नाम के अनगिनत खजाने रखे हुए हैं, परन्तु हमारा मन बाहर के वहमों-भ्रमों को नहीं छोड़ता, कर्मकाण्ड को नहीं छोड़ता, शरीर के अन्दर जा कर उसकी तलाश नहीं करता। फिर हमारा मन उस दौलत को प्राप्त कैसे कर सकता है ?

हम सोचते हैं कि शायद ग्रन्थों-पोथियों या वेदों-शास्त्रों आदि के पढ़ने से मुक्ति हो जाती है, रोज़ सत्संग सुनने से ही मुक्ति मिल जाती है, सरोवरों में स्नान करने से ही मुक्ति मिल जाती है। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि बाहर का पानी चाहे कितना भी साफ-सुथरा क्यों न हो, वह हमारे शरीर का मैल उतार देगा, परन्तु जो हमारे पापों का, कर्मों का मैल है, वह पानी से धोने से कैसे साफ हो सकता है ? वह तो शब्द की कमाई से दूर होगा, नाम की कमाई से दूर होगा। हम बाहर के सरोवरों में स्नान करना मुक्ति का साधन समझते हैं। परन्तु गुरु अमरदास जी कहते हैं :

एहु सरीरु सरवरु है संतहु इसनानु करे लिव लाई ॥
नामि इसनानु करहि से जन निरमल सबदे मैलु गवाई ॥
(आदि ग्रन्थ, पृ. ९०९)

आप फ़रमाते हैं कि आपको संसार में इस शरीर से बड़ा और कोई सरोवर नहीं मिलेगा। यदि आप परमात्मा से प्यार करना चाहते

है तो इसमें जाकर स्नान करें। परन्तु शरीर के अन्दर कौन-सा स्नान करना है? शब्द का स्नान करना है, नाम का स्नान करना है। जब तक हमारी आत्मा शरीर के अन्दर जाकर नाम और शब्द का स्नान नहीं करती, इन कर्मों का सिलसला किस प्रकार समाप्त हो सकता है, आत्मा के ऊपर से मैल और गन्दगी के गिलाफ किस तरह दूर हो सकते हैं?

हम और क्या करते हैं? लम्बी-लम्बी जटाएँ रख लेते हैं, शरीर पर भभूत लगाना शुरू कर देते हैं। आप देखें, इन साधनों से हमें अन्दर क्या प्राप्त हो सकता है? स्वामीजी महाराज कहते हैं कि भाई मालिक से मिलने का केवल एक ही उपाय है: 'लग शब्द अनाहद जाई।' कि अपने अन्तर में अनहद शब्द को पकड़, अनहद शब्द से ख़याल जोड़। जब तक तू अन्दर अनहद शब्द को नहीं पकड़ता, बाहर जितना मरज़ी तू किसी चीज़ को भी मत्थे टेकता रह, तेरे हाथ पल्ले कुछ भी नहीं पड़ेगा। इसलिये महात्मा हमें बाहर के वहमों, भ्रमों और संकल्पों में से निकालते हैं और हमारे ख़याल को अन्दर शब्द की ओर ले जाते हैं, नाम की ओर ले जाते हैं।

बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छूटे न कूजा॥

अब मन में ख़याल आता है कि क्या और भी कोई उपाय है, और भी कोई साधन है कि जिससे हम देह के बंधनों से छुटकारा प्राप्त कर सकेंगे? स्वामीजी महाराज बड़ा ज़ोर देकर समझाते हैं, 'बिन शब्द उपाव न दूजा।' भाई, नाम या शब्द की कमाई के सिवाय कोई उपाय, कोई तरीका नहीं कि तू देह के बंधनों से छुटकारा प्राप्त कर सके। बाकी जितने भी साधन तू करता है, उनका फल तुझे ज़रूर मिल जायेगा। उन साधनों के कारण हम सेठ-साहूकार बन जायेंगे, राजा-महाराजा बन जायेंगे, जाति, धर्म या देश का शासन प्राप्त करके आ जायेंगे, ज़्यादा से ज़्यादा बैकुण्ठों और स्वर्गों तक चले जायेंगे। पर इन साधनों से कभी भी देह के बन्धनों से छुटकारा नहीं हो सकेगा। गुरु अमरदास जी कहते हैं: 'बिनु नावै होर पूज न होवी भरमि भुली

लोकाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ९१०) कि शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई मालिक की भक्ति नहीं है, कोई मालिक की पूजा नहीं है व्यर्थ ही दुनिया के जीव वहमों-भ्रमों में फँस कर भूले फिरते हैं। आप सोचें, यदि शब्द और नाम की कमाई ही मालिक की एकमात्र भक्ति है, तो ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों के पढ़ने से क्या लाभ हुआ सरोवरों में स्नान करने का, जप, तप, पूजा-पाठ करने का क्या लाभ हुआ, जटा रखने का, भभूत लगाने का क्या लाभ हुआ, माथे टेकने मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में जाने का क्या लाभ हुआ, बेटे-बेटियों को छोड़ने का क्या फायदा हुआ ? गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'नाम विसारि चलहि अनमारगि अंत कालि पछुताही ॥' (आदि ग्रन्थ पृ० ११५३) कि आप नाम की कमाई करने का तरीका छोड़कर जिस भी मार्ग पर चलने की कोशिश करेंगे, अंत में मृत्यु के समय पछताना पड़ेगा कि हमने व्यर्थ अपने बहुमूल्य समय को नष्ट कर दिया। क्यों पछताना पड़ता है ? 'विणु नावै दरि ढोई नाही ता जम करे खुआरी ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ७५४) शब्द और नाम की कमाई के बिना आपको कभी मालिक के घर जाने की इजाज़त नहीं मिलेगी यमदूतों के हाथों खराब होना पड़ेगा। गुरु साहिब बड़े सुन्दर ढंग से उदाहरण देकर समझाते हैं : 'अनिक करम कीए बहुतेरे ॥ जो कीजै सो बंधनु पैरे ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० १०७५) हम मन-बुद्धि से देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त करने के लिए जितने भी साधन और तरीके सोचते हैं ये साधन हमें अच्छी तरह देह के बन्धनों में मज़बूती से जकड़ देते हैं। किस प्रकार जकड़ देते हैं ? 'कुरुता बीज बीजे नहीं जंमै सभु लाहा मूलु गवाइदा ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० १०७५) यदि आप ज़मीन में बे-मौसम का बीज बोते रहेंगे तो चाहे कितना ही अच्छा बीज क्यों न हो, आप चाहे कितनी ही खाद डालें, पानी दें, रखवाली करें, वह फसल कभी किसी के घर में नहीं पहुँचती।

सब किसानों को पता है कि अक्तूबर और नवम्बर के महीने में गेहूँ बोया जाता है। अगर कोई मई और जून की धूप में गेहूँ बोयेगा

वह जितना मरज़ी हल चला ले, खाद डाले, फ़सल तो कभी उसके घर नहीं आ सकती । गुरु साहिब कहते हैं : 'कलजुग महि कीरतनु परधाना ।। गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. १०७५) कलियुग में महात्मा ने केवल उस कीर्तन की महिमा की है, जिसको गुरुमुख लोग बड़े ध्यान से अपने अन्तर में सुनते हैं । यह बाहर का कीर्तन नहीं है । यह शब्द और नाम रूपी कीर्तन सबकी आँखों के पीछे दिन-रात धुनकारें दे रहा है । इसी बात को स्पष्ट करते हुए गुरु अमरदासजी फ़रमाते हैं :

इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई । पूरै गुरि सभ सोझी पाई ।।
ऐथै अगै हरिनामु सखाई ।। (आदि ग्रन्थ, पृ० २३०)

चार युग एक-दूसरे के बाद चक्कर लगा रहे हैं, सतयुग है, त्रेता है, द्वापर है, कलियुग है । प्रत्येक युग में जीवन की भिन्न-भिन्न परिस्थितियां हैं । सतयुग में हमारी आयु बहुत लम्बी होती थी, हमारा स्वास्थ्य भी अच्छा होता था, हमारा ख़याल भी संसार में फैला हुआ नहीं था, थोड़े से परिश्रम से हमारा ध्यान मालिक की भक्ति की ओर लग जाता था । जैसे-जैसे युग बदलते गये, हमारी आयु भी छोटी होती गई, स्वास्थ्य भी बिगड़ता गया और ख़याल भी संसार में फैलता गया। जो साधन हमें सतयुग में काम देते थे, वे अब कलियुग में नहीं दे सकते । आजकल तो कोई भाग्यशाली जीव ही सत्तर-अस्सी वर्ष बिताकर जाता है । स्वास्थ्य भी इतना बिगड़ गया है कि हम लगातार एक-डेढ़ घण्टा भी एक आसन पर बैठ कर मालिक की भक्ति नहीं कर सकते । ख़याल भी इतने फैले हुए हैं कि हम पांच मिनिट भी किसी बात पर एकाग्र होकर विचार नहीं कर सकते । इसलिए गुरु साहिब प्यार से समझाते हैं कि अगर तुम कलियुग में जीवन के चार दिन शान्ति से गुज़ारना चाहते हो और वापस जाकर परमात्मा से मिलना चाहते हो तो केवल नाम की कमाई करो, शब्द की कमाई करो । जो लोग उठते-बैठते, चलते-फिरते शब्द और नाम से ख़याल जोड़कर रखते हैं, वे सदा के लिए मर जाते हैं । उनको बार-बार जन्म-मरण के

दुःखों में नहीं आना पड़ता। गुरु अमरदासजी फ़रमाते हैं :

नामि रते परम हंस बैरागी निज घरि ताड़ी लाई हे ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ० १०४६)

जो लोग उठते-बैठते, चलते-फिरते नाम के रंग में रच जाते हैं, नाम के रंग में रंग जाते हैं, वे 'परमहंस बैरागी' बन जाते हैं। परमहंस बैरागी कब बनते हैं ? जब हम मन और माया के दायरे से पार हो जाते हैं, जब हमारी आत्मा के ऊपर से सभी गन्दे-गन्दे गिलाफ़ उतर जाते हैं। आप फ़रमाते हैं :

सबदि मरै सोई जनु पूरा ॥ सतिगुरु आखि सुणाए सूरा ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ० १०४६)

कि हमारे सूरमे, बहादुर सतिगुरु ने हमें यही उपदेश दिया है कि जो उठते-बैठते, चलते-फिरते अन्दर ख़याल को शब्द और नाम से जोड़ कर रखता है, वह पूर्ण हो जाता है और पूर्ण परमात्मा में समाने के योग्य हो जाता है। गुरु नानक साहिब बड़ा सुन्दर उदाहरण देते हैं :

सूहटु पिंजरि प्रेम कै बोलै बोलणहारु ॥
सचु चुगै अंमृतु पीऐ उडै त एका वार ॥ (आदि ग्रन्थ, पृ० १०१०)

हमारा शरीर एक पिंजरा है। हमारी आत्मा तोता है। जिस प्रकार तोता पिंजरे से प्यार करके तरह-तरह की बोलियां बोलता है, उसी प्रकार हमारी आत्मा भी इस शरीर से प्यार किये बैठी है। इस शरीर के अन्दर बैठ कर लोगों के शरीरों से प्यार किये बैठी है तथा कई प्रकार की बोलियां बोलती है। कभी अच्छी बोली बोलती है, कभी मन्दी बोली बोलती है। देह में बैठकर कभी हम हँसते हैं, कभी रोते हैं। गुरु नानक साहिब कहते हैं कि यदि तोता पिंजरे का प्यार छोड़ दे, तो वह पिंजरे की कैद से आज़ाद हो जाये। यदि हमारी आत्मा इस शरीर का प्यार छोड़ देगी तो यह देह के बन्धनों से मुक्त हो जायेगी। परन्तु तोता पिंजरे का प्यार किस प्रकार छोड़ सकता है ? गुरु साहिब कहते है : 'सचु चुगै अंमृतु पीऐ उडै त एका वार ॥' हरएक की आंखों के पीछे परमात्मा ने सच का चोगा रखा हुआ है।

जब आंखों के पीछे आकर उस सच या शब्द के चोगे को चुगना शुरू कर देंगे, 'उडै त एका वार।' हम सदा के लिए देह के बन्धनों से मुक्त हो जायेंगे। जो चीज़ हमें देह के बन्धनों से मुक्त करती है, वह शब्द की कमाई है, नाम की कमाई है। इसलिए स्वामीजी कहते हैं : 'बिन शब्द उपाव न दूजा।' भाई, शब्द और नाम की कमाई के बिना कोई उपाय नहीं है, कोई साधन नहीं है कि तू देह के बन्धनों से छुटकारा पा सके।

घर में घर गुरु दिखलावें। धुन शब्द पाँच बतलावें ॥

स्वामीजी महाराज कहते हैं, 'घर में घर गुरु दिखलावें।' यह घर कौन-सा है ? हमारा शरीर है। वह घर कौन-सा है ? जिस जगह परमात्मा रहता है। जिस परमात्मा की सब को खोज है, वह परमात्मा कहीं बाहर नहीं है, वह हमारी देह और शरीर में है। यदि कोई प्रयोगशाला है, जिसके अन्दर जाकर ही हम मालिक की खोज कर सकते हैं तो वह केवल हमारा शरीर, हमारी देह और हमारा वजूद है। हज़रत ईसा ने समझाया था : 'रिपेन्ट किंगडम आफ़ गाड इज़ एट हेंड।' जो कुछ पिछले जन्मों में कर्म कर बैठे हो, उनका पश्चाताप करो, उनका हिसाब-किताब करो, परमात्मा कहीं बाहर नहीं हैं, वह तुम्हारी देह और शरीर में बैठा हुआ है। गुरु अमरदास जी कहते हैं : 'काइआ अंदरि जगजीवन दाता वसै सभना करे प्रतिपाला ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ० ७५४) वह परमेश्वर जिसने सारे जग को जीवन दिया है, जो सबका दाता और बादशाह है, जो सबकी संभाल और सबका पालन करता है, वह परमेश्वर इस काया, देह या शरीर में बैठा हुआ है। कबीर साहिब कहते हैं :

जिउ तिल में तेल है, चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुझ में, जाग सके तो जाग ॥

जिस प्रकार तिलों के अन्दर तेल होता है, पत्थर के अन्दर अग्नि होती है, उसी प्रकार वह परमात्मा भी हमारे शरीर के अन्दर है। पलटू साहिब कहते हैं : 'साहिब साहिब क्या करे, साहिब तेरे पास।' कि तुम

किस परमात्मा को जंगलों-पहाड़ों में ढूंढते फिर रहे हो। वह परमात्मा न कहीं आसमान के पीछे छिपा हुआ है, न वह ईंटों-पत्थरों में मिलेगा, न कभी सरोवरों-नदियों में मिलेगा। वह परमात्मा चौबीस घण्टे तुम्हारे साथ-साथ घूम रहा है। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'सदा हज़ूरि दूरि न जाणहु ।। गुरसबदी हरि अंतरि पछाणहु ।।' (आदि ग्रन्थ, ११६)। वह परमात्मा चौबीस घण्टे तुम्हारे साथ हैं। गुरुमुखों के पास जाकर, शब्द की कमाई करके अपने शरीर के अन्दर ही मालिक को पहचानने की कोशिश करो।

महात्मा कहते हैं कि यदि कोई सच्चे से सच्चा गुरुद्वारा है, मन्दिर है, मस्जिद है, ठाकुरद्वारा है तो वह केवल हमारा शरीर, हमारी देह, हमारा वजूद ही हो सकता है। ऋषि-मुनियों ने इसे 'नर-नारायणी' देह कहकर समझाने का प्रयत्न किया है। यह वह शरीर है, जो उस नारायण ने स्वयं पैदा किया है, जिसके अन्दर वह नारायण स्वयं बैठा हुआ है और जिसके अन्दर ही हमारी आत्मा को नारायण या परमात्मा होने का गौरव प्राप्त हो सकता है। हजरत ईसा ने हमारे शरीर को 'जीवित परमात्मा का मन्दिर' कहकर याद किया है। गुरु नानक साहिब तो साफ़ कह रहे हैं : 'हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ० १३४६)। कि केवल हमारा शरीर ही मालिक के रहने का असली हरि-मन्दिर है। जब भी हमें उस मालिक से मिलने का ज्ञान होगा, केवल अपने शरीर के अन्दर से ही होगा।

मन में विचार आता है कि यदि वह परमात्मा हमारे शरीर के अन्दर है तो वह हमें दिखाई क्यों नहीं देता ? हम आंखें बन्द करते हैं, हमें तो अपने अन्दर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई देता है। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'एका संगति इकतु गृहि बसते मिलि बात न करते भाई ।।' (आदि ग्रन्थ, पृ. २०५)। दोनों इकट्ठे रहते हैं, दोनों का एक ही घर में निवास है, परन्तु आपस में मिलाप नहीं है। आत्मा भी इसी शरीर में है, परमात्मा भी इसी शरीर में है। न कभी आत्मा ने परमात्मा के दर्शन किये, न कभी आत्मा सुहागिन हुई। गुरु साहिब कारण बताते

है : 'अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ॥' (आदि ग्रन्थ, पृ. २०५) । कि भाई, परमात्मा तेरे शरीर के अन्दर है, तुझे दिखाई इसलिए नहीं देता कि तेरे और परमात्मा के बीच हौमैं की रुकावट है, खुदी की रुकावट है ।

हौमैं क्या है ? यह जो हम सारा दिन सोचते रहते हैं कि यह मेरी सम्पत्ति है, मेरी सन्तान है, मेरी जाति है, मेरा धर्म है, मेरा देश है, यही हौमैं है । जिनको सारा दिन मेरा-मेरा कहते रहते हैं, वह सब-कुछ ही उस परमात्मा का है । हम अपने आपको परमात्मा से अलग समझे बैठे है और इनको अपना बनाने की कोशिश करते हैं । ये न तो आज तक कभी किसी के बने हैं, न कभी बन ही सकने हैं । परन्तु जो इन्हें अपना बनाने की कोशिश करते हैं, वह कोशिश हमें इनके मोह और प्यार में फँसा देती है । 'जहां आसा तहां बासा ।' इनका मोह हरएक को देह के बन्धनों की ओर खींच कर ले आता है, क्योंकि जिधर हमारा सारी उमर ख़याल रहता है, हम मौत के बाद उसी धारा में बहना शुरू कर देते हैं ।

कौन-सी चीज़ हमें बार-बार देह के बन्धनों में लाई ? संसार का मोह और प्यार लाया । यह किसने पैदा किया ? हमारे मन ने पैदा किया । गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'मन जीते जगु जीतु ॥' कि भाई, अगर तू मन को जीत लेगा, तू सारे संसार के बनाने वाले को ही जीत लेगा । आप सोचें, यह हमारा मन ही तो है जिसके अधीन होकर भाई, भाई का दुश्मन है, राष्ट्र, राष्ट्र का दुश्मन है, धर्म, धर्म का दुश्मन है। किस प्रकार रोज़ एक-दूसरे के गले काटने की योजनाएँ और उपाय हम सोचते रहते हैं । यह हम से कौन करवा रहा है ? हमारा मन करवा रहा है । जब तक हम मन पर हावी नहीं होते, मन को अपने अधीन नहीं करते, अपने रास्ते से मन की रुकावट दूर नहीं करते, बेशक परमात्मा सबके अन्दर बैठा हुआ है, पर हम अपने अन्दर उस परमात्मा को कभी प्राप्त नहीं कर सकते । सो हमें जो भी कोशिश करनी है, अपने रास्ते से मन की रुकावट दूर करने की करनी है ।

मन की रुकावट को रास्ते से दूर करने का क्या मतलब है? मैंने विनती की थी कि हमारी आत्मा और मन की गाँठ बँधी हुई है। जिस प्रकार हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है उसी प्रकार हमारा मन भी कोई छोटी चीज़ नहीं है। यह भी ब्रह्म का अंश है, त्रिकुटी का रहने वाला है, परन्तु विषय-विकारों में फँस कर अपने आपको खो बैठा है, अपने असल को खो बैठा है, अपने मूल को भूल चुका है। जो जो कर्म मन करता है, उसका परिणाम साथ-साथ हमारी आत्मा को भी भुगतना पड़ता है। जब तक हमारी आत्मा मन का साथ नहीं छोड़ती, न आत्मा को अपने आप की समझ आ सकती है, न अपने असल की समझ आ सकती है। इसीलिए सुकरात ने कहा था : 'अपने आप को पहचानो'। गुरु नानक साहिब कहते हैं : 'सो जनु निरमलु जिनि आपु पछाता' (आदि ग्रन्थ, १०४६) कि वे मनुष्य निर्मल हैं, पवित्र हैं, जो अपने आपको पहचानने के योग्य बन जाते हैं। हम अपने आपको कब पहचानते हैं? जब हम मन और माया के दायरे से पार चले जाते हैं, जब हमारी आत्मा के ऊपर से सभी गन्दे-गन्दे पर्दे उतर जाते हैं, जब हमारी आत्मा और मन की गांठ खुल जाती है।

मैंने अर्ज़ की थी कि आत्मा तो निर्मल थी, पवित्र थी, परन्तु मन का साथ लेने के कारण अति गन्दी और मैली हो चुकी है। आप देखें, बादलों के अन्दर पानी कितना साफ़-सुथरा होता है। जब बरसात बन कर धरती पर आता है, कितनी गन्दगी इकट्ठी कर लेता है और अपने आपको गन्दगी का भाग समझना शुरू कर देता है। जब उसे सूर्य का ताप या गर्मी मिलती है, वह भाप बन कर गन्दगी को छोड़ता है, उसे होश आ जाता है कि गन्दगी कोई और चीज़ है, मैं कोई और चीज़ हूँ, मैं व्यर्थ ही गन्दगी का साथ लेकर अपने-आप को गन्दा समझे बैठा था। जब गन्दगी से अलग होता है, फिर पता लगता है कि मेरा असल, मेरा मूल आकाश के बादल हैं, सीधा जाकर बादलों में समा जाता है। यह हम सबकी आत्मा की अवस्था है। यह परमात्मा का अंश है। परन्तु मन के अधीन होकर कर्मों के जाल में फँस कर

है। जब तक यह मन का साथ नहीं छोड़ेगी, न कभी आत्मा को अपने आपकी समझ आ सकती है, न उसे अपनी वास्तविकता की समझ आ सकती है।

आप देखें, एक बिजली का बल्ब कितना प्रकाश देता है। यदि पन्द्रह-बीस काले रंग के कपड़े उसके चारों ओर लपेट दें, उसका प्रकाश दिखाई नहीं देता। न हम उसका प्रकाश देख सकते हैं, न ही उससे कोई फ़ायदा उठा सकते हैं। काले कपड़े लपेटने से बल्ब का प्रकाश कम नहीं हुआ। अगर कपड़े उतार दें, तो प्रकाश देख भी सकते हैं, उससे पूरा-पूरा फायदा भी उठा सकते हैं।

आप देखें, हीरा कितना बहुमूल्य होता है, उसमें कितनी चमक होती है। आप उसे मिट्टी में फेंक दें, न तो उसके मूल्य का पता चलता है, न उसकी चमक दिखाई देती है। मिट्टी लगने से हीरे का मूल्य कम नहीं होता, चमक कम नहीं होती। मिट्टी धोनी पड़ती है, फिर उसका मूल्य भी प्राप्त कर सकते हैं, उसकी चमक भी देख सकते हैं। महात्मा समझाते है कि हमारी आत्मा निर्मल है, पवित्र है, क्योंकि वह परमात्मा का अंश है, परन्तु मन का साथ लेने के कारण अति गन्दी और मैली हो चुकी है। जो भी कोशिश करनी है, जो भी तरीका सोचना है, आत्मा और मन की गाँठ को खोलने का सोचना है।

अब हम सब संसार के जीव हज़ारों ही युक्तियों और साधनों से मन को वश में करने का प्रयत्न करते हैं। जप-तप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, दान-पुण्य करते हैं, घर-बार छोड़ कर जंगलों-पहाड़ों में जाकर छिप जाते हैं। मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में भी जाते हैं, सत्संग भी सुनते हैं। ये सभी साधन, सभी तरीके हम केवल अपने मन को वश में करने के लिए ही करते हैं। हम हठ-कर्मों के द्वारा बलपूर्वक अपने ख़याल को दुनिया से निकालने की कोशिश करते हैं। आगे जाकर मन कहीं लगता नहीं, संसार में ही भटकना शुरू कर देता है।

बलपूर्वक मन को संसार से निकलना उसी प्रकार है, जिस प्रकार आप एक साँप को पकड़ कर पिटारी में बन्द कर लेते हैं। पिटारी में

बन्द करने से न तो सांप के अन्दर से क्रोध जाता है, न विष जाता है, न रोष जाता है। जब तक वह पिटारी में बन्द है, आप उसके डंक से, विष से ज़रूर बचे हुए हैं, जब भी उसे पिटारी से बाहर निकलने का मौका मिलेगा, वह डंक ज़रूर मारेगा, कभी अपनी आदत से बाज़ नहीं आयेगा । यदि उसी साँप को पकड़ कर उसकी विष की थैली ही निकाल दें, वह साँप नुकसान नहीं पहुँचा सकता, चाहे उसे दिन भर गले में लटकाये फिरें। हम जंगलों-पहाड़ों में छिपकर, सत्संग सुनकर, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़कर सोच लेते हैं कि हमारा मन बहुत निर्मल हो गया है, पवित्र हो गया है, परन्तु वही कामनायें, वही तृष्णायें हरएक के अन्दर दबी रहती हैं। जब मन का ज़ोर चलता है, वह फिर से अंगुलियों पर नचाना शुरू कर देता है, बल्कि साधारण मनुष्यों से भी हमारी दशा बदतर और बुरी होनी शुरू हो जाती है । आप देखें, यदि हम एक बदमाश को पुलिस को सौंप आयें तो जब तक वह पुलिस की हिरासत में है, हम उसकी शरारतों से अवश्य बचे रहते हैं, जब उसको पुलिस छोड़ देती है तो वह बस्ती में आकर फिर वैसी ही शरारतें करनी शुरू कर देता है। यदि हम उसे पुलिस के हवाले करने की बजाये समझा कर भला मानस, नेक इन्सान बना लें, हम हमेशा के लिये उसकी शरारतों से बच जाते हैं। महात्मा समझाते हुए कहते हैं कि हठ-कर्मों के द्वारा मन की बुरी आदतों तथा शरारतों से थोड़े समय के लिए बच सकते हैं, सदा के लिये मन को वश में नहीं कर सकते ।

यदि मन को सदा के लिए वश में करना चाहते हैं तो सबसे पहले मन की आदत और स्वभाव के सम्बन्ध में अच्छी तरह सोच और विचार करना पड़ेगा। हम देखते हैं कि हमारा मन लज्जत का आशिक है, स्वाद का प्रेमी है। हम एक चीज़ से प्यार करते हैं, अगर हमें उससे साफ-सुथरी दूसरी चीज़ दिखाई दे तो हम पहली को छोड़कर दूसरी के पीछे दौड़ना शुरू कर देते हैं। कोई भी संसार का मोह, संसार का प्यार, हमारे मन को सदा के लिए लेकर खड़ा नहीं हो सकता। सारी

उमर को अपनी आँखों के सामने रखकर देखें, बचपन में हमारा माता-पिता से कितना प्यार होता था, दो मिनिट के लिए भी माता-पिता घर से दूर चले जाते थे, हम चीखना-चिल्लाना शुरू कर देते थे। जब दो-तीन भाई-बहन हो जाते हैं, हम उनके प्यार में लग जाते हैं, माता-पिता को भूलना शुरू कर देते हैं। जिस समय स्कूलों-कालेजों में जाते हैं, वही प्यार अपने दोस्तों-मित्रों से हो जाता है। शादी होती है, पत्नी, बाल-बच्चों से प्यार हो जाता है। वृद्ध होते हैं, जातियों, धर्मों, और देशों तक फैल जाता है। एक प्यार है, कितनी शक्लें, कितने रूप बदलता है। परन्तु कोई भी प्यार सदा के लिए हमारे मन को लेकर खड़ा नहीं हो सकता।

महात्मा कहते हैं कि मन स्वाद का प्रेमी है। जब तक आप मन को संसार के मोह और प्यार से ऊँचा और निर्मल प्यार नहीं देंगे, यह संसार का मोह और प्यार छोड़ने को तैयार नहीं होगा। आप देखें, यदि कोई कौड़ियाँ माँगता फिरता हो, आप उसकी एक कौड़ी लेने की कोशिश करें, वह मरने-मारने के लिए तैयार हो जाता है। दस रुपये का नोट उसके हाथ में दे दें, उसकी कौड़ियों वाली मुट्ठी अपने आप ही ढीली हो जाती है। लड़कियाँ गुड़ियों से तब तक खेलती हैं, जब तक उनकी शादी नहीं होती। शादी के बाद कौन गुड़ियों की परवाह करता है। इसलिए महात्मा कहते हैं कि जब तक हमारे मन को संसार से ऊँचा और निर्मल प्यार नहीं मिलेगा, यह संसार का मोह और प्यार कभी छोड़ने को तैयार नहीं होगा। वह किस चीज़ का स्वाद है, किस चीज़ का प्यार है? गुरु रामदास जी कहते हैं: 'नाम मिलै मनु तृपतीऐ बिनु नामै धृगु जीवासु ॥' (आदि ग्रन्थ, ४०)। यह जो हमारा मन विषय-विकारों में फँस कर हिरन की तरह दिन-रात भटकता और तड़पता फिरता है, जिस समय इसको अन्दर अमृत से भरा हुआ नाम मिल जायेगा, इसकी तड़प खत्म हो जायेगी। उस नाम का स्वाद इतना ऊँचा और निर्मल है कि उस स्वाद को प्राप्त करके हमारा मन अपने आप इन्द्रियों के भोगों, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों को छोड़

देगा। जिनको हीरे-जवाहरात मिल जाते हैं, वे फिर कौड़ियों के पीछे दर-बदर ठोकरें नहीं खाते। मैंने विनती की थी कि लड़कियाँ तब तक ही गुड़ियों से खेलती हैं जब तक उनकी शादी नहीं होती। केवल आसक्ति या प्यार ही हमारे अन्दर अनासक्ति या वैराग्य पैदा कर सकता है, त्याग कभी किसी के अन्दर प्यार पैदा नहीं कर सकता। यदि किसी लड़की को शादी से पूर्व समझाने की कोशिश करें कि देख बेटी, तेरे शादी की तारीख रख दी गई है, तू अब माता-पिता का प्यार छोड़ दे, बहन-भाई का प्यार छोड़ दे, सखी-सहेलियों का प्यार छोड़ दे, तो वह बेचारी कितनी ही कोशिश करे, कभी सफल नहीं हो सकती। जिस समय उसकी शादी हो जाती है, पति से उसका प्यार हो जाता है, तब वह माता-पिता को भी भूल जाती है, बहन-भाई को भी भूल जाती है, सखी-सहेलियों को भी भूल जाती है। एक आदमी के मोह और प्यार ने सारे संसार का मोह और प्यार उसके अन्दर से निकाल दिया। यही हमारे मन की आदत है। यह भी ऊँचे स्वाद को पाकर नीचे स्वाद को छोड़ देता है। जब इसे शब्द का स्वाद मिल जाता है; नाम का स्वाद मिल जाता है, इसका ख़याल अपने आप विषय-विकारों में से निकल जाता है।

मैंने अर्ज़ की थी कि हमारे शरीर के अन्दर आत्मा और मन का जो स्थान है, वह यहाँ आँखों के पीछे है। जब हम नौ द्वारों में से सुमिरन और ध्यान के द्वारा ख़याल यहाँ लाकर अन्तर में शब्द का स्वाद लेते हैं, तब हमारे मन का झुकाव नीचे से ऊपर की ओर हो जाता है। फिर यह मन नीचे इन्द्रियों के भोगों की ओर नहीं जाता। उस प्रकाश के द्वारा मन अपने घर के दरवाज़े पर आना शुरू कर देता है। फिर अपने आप ख़याल दुनिया से निकलना शुरू हो जाता है। उस शब्द का प्यार हमें संसार की ओर से उदास या अनासक्त करना शुरू कर देता है। जब मन शब्द के सहारे वापस अपने ठिकाने पर पहुँच जाता है, आत्मा इसके पंजे से आज़ाद हो जाती है, आत्मा और मन की गाँठ खुल जाती है, फिर हम अपने आप को पहचानने के योग्य हो जाते

हैं, परमात्मा को पहचानने के योग्य बन जाते हैं।

इसलिए यहां स्वामीजी महाराज प्यार से समझाते हैं : 'घर में घर गुरु दिखलावें।' संत-महात्मा, मालिक के भक्त और प्यारे समझाते हैं कि इस शरीर रूपी घर में बैठकर हमें अपने असली घर किस प्रकार पहुँचना है ? वह कौन-सा मार्ग है जिस पर चलकर हमें अपना रूहानी सफ़र तय करते हुए वापस अपने ठिकाने पर आ जाना है ? वह कौन-सा उपाय और साधन है जिसके द्वारा मन की रुकावट को दूर करना है ? आप फ़रमाते हैं : 'धुन शब्द पाँच बतलावें।' कि पाँच शब्द, पांच धुन हरएक के अन्दर आँखों के पीछे धुनकारें दे रही हैं जिनकी सहायता से रूहानी सफ़र तय करके हमें वापस घर पहुँचना है।

शब्द तो एक है, परन्तु वह पांच मंज़िलों में से होकर आ रहा है, इसलिए आम संत-महात्माओं ने और स्वामीजी महाराज ने इसको पांच शब्द या पांच नाम कहकर याद किया है। आप देखें, नदी एक स्थान से निकल कर समुद्र में जाकर समा जाती है। जिस स्थान से नदी निकलती है, उस स्थान की आवाज़ और तरह की होती है, जब खड्डों में से होकर निकलती है, आवाज़ बदल जाती है, जब झरना बनकर गिरती है फिर आवाज़ बदल जाती है, जब मैदान में फैलती है तो आवाज़ बदल जाती है, जब समुद्र में समा जाती है तो और आवाज़ हो जाती है, परन्तु नदी हर स्थान पर एक ही होती है। इसी प्रकार वह शब्द एक ही है जो कि धुर से, सचखण्ड से उठकर सबकी आंखों के पीछे आ रहा है, परन्तु पांच मंज़िलों में से होकर आ रहा है, इसलिए महात्मा ने पांच शब्द या पांच नाम कहकर इसका वर्णन किया है। गुरु नानक साहिब भी कहते हैं :

> घर महि घरु देखाइ देई सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
> पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ॥
>
> (आदि ग्रन्थ, पृ० १२९०)

कि जो महात्मा हमें घर के अन्दर से हमारे असली घर पहुँचा देता है, वही हमारा असली सतगुरु है। किस प्रकार पहुँचा देता है ?

उसकी निशानी यह है कि वह सबकी आँखों के पीछे धुनकारें दे
पाँच धुनों का ज्ञान देता है। उन पाँच शब्दों के द्वारा हम वापस अ
मंजिल या लक्ष्य पर पहुँच जाते हैं। कबीर साहिब ने भी पांच शब्द
वर्णन किया है, मुसलमान फकीर भी पांच शब्द का वर्णन करते
सो हमें अपने ध्यान को आंखों के पीछे लाकर उस शब्द की लज़
प्राप्त करनी है, उस नाम की लज़्ज़त प्राप्त करनी है । वह लज़
इतनी ऊँची और निर्मल है कि उस नाम को पाकर हमारा मन अ
आप इन्द्रियों के भोगों और विषय-विकारों को छोड़ देगा।

धुन में अब सुरत लगावो। इस घर से उस घर जावो ॥

आप समझाते हैं कि 'इस घर से उस घर जावो।' इस शरीर रू
घर में बैठकर हमें सचखण्ड रूपी निजघर की खोज कर लेनी चाहिए
उस घर को भूल कर हम दुःखी हो रहे हैं, मुसीबतों से घिरे हुए है
जितना इस घर में शांति और सुख ढूँढने की कोशिश करते हैं, उत
ही हम दुनिया के जीव दुःखी होते जा रहे हैं। क्यों दुःखी हो रहे हैं
क्योंकि जिन चीज़ों में सुख ढूँढते हैं, वे सभी नाशवान हैं, अस्थाई
आरज़ी हैं। इनका सुख और आराम भी थोड़े समय के लिए आर
और नाशवान ही हो सकता है। ये जो भी थोड़े-बहुत सुख दिखाई दे
हैं, सब धीरे-धीरे दुःखों में परिवर्तित होने शुरू हो जाते हैं। शा
होती है, मन में कितनी खुशी होती है। उसी साथी से यदि अनब
शुरू हो जाये, घर नरक बन जाता है। सन्तान पैदा होती है, कित
पुण्य-दान करते हैं, दावतें देते हैं, परन्तु हरएक का अनुभव है कि वह
बाल-बच्चे कभी बीमार हो जाते हैं, कभी नालायक निकल जाते है
कभी परमात्मा इन्हें वापस बुला लेता है। वही सन्तान हमारे लि
कितने दुःख का कारण बन जाती है। हम हुकूमत के नशे में सुख ढूँढ
हैं। जब लोग हमारे जुलूस निकालते हैं, हमारी जय-जयकार करते है
हमारा मन फूला नहीं समाता। परन्तु उन नेताओं की कहानी भी ह
पता है कि किस प्रकार रातो-रात राज्य पलट जाते हैं, लोग गोलिय
का शिकार बना देते हैं, जेलखानों में डाल देते हैं, पैरों के नीचे उनक

मिट्टी पलीत करना शुरू कर देते हैं।

इन चीज़ों से हमें सदा रहने वाला सुख क्यों नहीं मिलता ? परमात्मा ने यह दुनिया दुःखों और सुखों की नगरी बनाई हुई है। स्वामीजी महाराज कहते हैं : 'तजो मन यह दुख-सुख का धाम। लगो तुम चढ़ कर अब सतनाम।' (सार बचन, ११९) कि यह दुनिया दुःखों और सुखों की नगरी है। आप इसमें सदा के लिये सुख और शान्ति नहीं ढूँढ सकेंगे। यदि आप को असली सुख और शान्ति प्राप्त करनी है, तो 'सतनाम' भाव अपने वास्तविक घर, वापस चलें। उस घर में पहुँच कर ही आप सच्चा सुख और सच्ची शान्ति प्राप्त कर सकेंगे। हमें अपने पिछले जन्मों के पुण्य और पाप के कारण मनुष्य का चोला मिलता है। हम इस देह में बैठकर पुण्य का हिसाब देते हुए सुखी हो जाते हैं, पापों का हिसाब देते हुए दुःखी हो जाते हैं। यदि हमारे केवल पुण्य होते, हम स्वर्गों में बैठे होते, यदि केवल पाप ही होते, नरकों में जलते होते। किसी के अधिक पुण्य हैं और थोड़े पाप हैं, जिस कारण वह ज़्यादा सुखी दिखाई देता है, थोड़ा दुःखी दिखाई देता है। किसी का पापों का बोझा अधिक है, पुण्य का कम है, वह ज़्यादा दुःखी और थोड़ा सुखी है, परन्तु दुःख-सुख तो प्रत्येक जीव को शरीर में बैठकर भुगतने ही पड़ते हैं। महात्मा कहते हैं कि अगर हमेशा के लिये सुख प्राप्त करना है तो अपने असली घर की तलाश करें। गुरु अमरदास साहिब कहते हैं : 'जिन्ही घरु जाता आपणा से सुखीए भाई ॥' (आदि ग्रन्थ, ४२५) कि जो अपने घर पहुँच जाते हैं, सच्चा सुख और सच्ची शान्ति उन गुरुमुखों को ही प्राप्त होती है। जब तक हम परदेसियों की तरह, बेरोज़गारों की तरह इस दुनिया में मारे-मारे फिर रहे हैं, हम सुख किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं ? हम अपने घर पहुँच कर ही सच्चा सुख प्राप्त कर सकेंगे। स्वामीजी महाराज प्यार से कहते हैं कि जब तक परमात्मा ने आपको इस शरीर के अन्दर बैठने का मौका दिया है, आपको अपने असली घर की खोज कर लेनी चाहिये, वापस असली घर पहुँच जाना चाहिये। किस प्रकार घर जाना है ? 'धुन में

अब सुरत लगावो ।' सबकी आंखों के पीछे शब्द या नाम धुनकारें
रहा है, उसमें सुरत को जोड़ें, उस शब्द को पकड़ें । उस शब्द क
आवाज़ और प्रकाश के ज़रिये धीरे-धीरे अपना सफर तय करते हु
आप मंज़िले-मकसूद अर्थात् लक्ष्य पर पहुँच जायेंगे ।

वह घर है अगम अपारा । दसवें के पार निहारा ॥
दस द्वारा घट चढ़ खोलो । सत शब्द अधर पैं तोलो ॥

अब स्वामीजी महाराज फिर अन्दर के रूहानी सफ़र का इशा
करते हैं कि आपका रूहानी सफ़र पैरों के तलुओं से शुरू होकर सि
की चोटी तक जाता है । इस सफ़र की दो मंज़िलें हैं : एक आंखों त
है, एक आंखों से ऊपर है । आंखों के नीचे-नीचे इन्द्रियों के भोग है
विषय-विकारों के स्वाद हैं । जितनी देर आपका ख़याल आंखों
नीचे-नीचे है, आपको अपने घर का दरवाज़ा ही नहीं मिला, घ
जाने का मार्ग ही नहीं मिला, जिसके कारण आप कभी अपना रूहान
सफ़र तय नहीं कर सकेंगे । जब सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँख
के पीछे ख़याल इकट्ठा करेंगे, तब आपको घर का मार्ग मिलेगा, जि
मार्ग पर चलकर आपको रूहानी सफ़र तय करना है । फिर आपक
ख़याल अन्दर उस शब्द और नाम के साथ जुड़ता है, जिस शब्द क
पकड़ कर ही आप मंज़िल-दर-मंज़िल वापस अपने घर की ओर ज
सकेंगे ।

बिन मेहर गुरु नहिं पावे । बिन शब्द हाथ नहिं आवे ॥

स्वामीजी महाराज की सारी शिक्षा का सार एक पंक्ति में बया
किया जा सकता है : 'बिन मेहर गुरु नहिं पावे । बिन शब्द हाथ नहि
आवे ॥' आप कहते हैं कि शब्द और नाम की कमाई के बिना को
कभी भी परमात्मा की प्राप्ति नहीं कर सकता । चाहे कितने ही यत्न
तथा उपाय क्यों न करले, आप गुरुमुखों के बिना शब्द और नाम क
कमाई नहीं कर सकते । गुरुमुख घोल कर हमारे अन्दर कुछ नह
डालते, उस परमात्मा ने शब्द और नाम की सम्पत्ति हमारे अन्द
हमारे लिये रखी हुई है । गुरुमुख तो इशारा करते हैं, उपाय बताते

कि किस उपाय और साधन के द्वारा हम अपने ख़याल को अन्दर शब्द और नाम से जोड़ सकते हैं। गुरु नानक साहिब बड़ा सुन्दर उदाहरण देते हैं:

जिउ ओडा कूप गुहज खिन काढै तिउ सतिगुरि वसतु लहाईऐ ॥

(आदि ग्रन्थ, पृ० ११७९)

कि पुरानी आबादियों के नीचे बने-बनाये कुएँ मिट्टी के नीचे आकर दब जाते हैं। हम उस धरती पर चलते-फिरते हैं, हमें पता नहीं होता कि बना-बनाया कुआँ यहां मिट्टी के नीचे दबा हुआ है। 'ओड' वे सज्जन हैं जो कि अपने इल्म और विद्या से हमें समझा देते हैं कि इस स्थान पर धरती की खुदाई करो, तुम्हें बना-बनाया कुआँ मिल जायेगा। वे कुआँ लगा कर, मिट्टी से दबा कर, खबर देने के लिये नहीं आते। उन्हें जानकारी और अनुभव है, जिससे लाभ उठाकर हम कुएँ के पानी का उपयोग करना शुरू कर देते हैं। इसी प्रकार महात्मा समझाते हैं कि मालिक के भक्तों और प्यारों, संत-सतगुरुओं ने हमारे अन्दर घोल कर कुछ नहीं डालना है, परमात्मा ने वह दौलत हमारे ही लिए, हमारे अन्दर रखी हुई है। उन्हें तो इशारा करना है, तरीका समझाना है, जिसके द्वारा हम अन्दर उस दौलत को प्राप्त करके बादशाह बन जाते हैं, हमारा जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा हो जाता है।

आप देखें कि विद्या की शक्ति हम सबके अन्दर मौजूद है, परन्तु वह सोई हुई है। जब हम स्कूलों-कालेजों में जाते हैं, अध्यापकों की आज्ञा मानते हैं, रातें जागते हैं, मेहनत करते हैं, तब बी० ए०, एम० ए०, विद्वान, इन्जीनियर, डॉक्टर आदि बन जाते हैं। जिनके पास डॉक्टर या इन्जीनियर की डिग्री है, पूछ कर देखें, अध्यापकों ने कौन-सी चीज़ घोल कर उनके अन्दर डाली हैं। केवल अध्यापकों की संगति और साथ करने से ही आज वे इतने लायक बने बैठे हैं। जो अध्यापकों से डर कर भाग आते हैं, विद्या की शक्ति तो उनके अन्दर भी होती है, पर वह सोई आती है और सोई हुई ही चली जाती है। इसलिये यहां स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं कि आपको जो कुछ मिलना है, वह शब्द

और नाम की कमाई से ही मिलना है और जब भी अपने ख़याल को अन्तर में शब्द और नाम से जोड़ सकेंगे, केवल गुरुमुखों के द्वारा ही जोड़ सकेंगे, साधू, सन्तों, महात्माओं के द्वारा ही जोड़ सकेंगे । गुरु अर्जुनदेव जी कहते हैं :

जिस का गृहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ।।
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ।।

(आदि ग्रन्थ, पृ० २०५)

कि हे भाई, जिस परमेश्वर ने तुझे पैदा किया है, उसने नाम रूपी सम्पत्ति तेरे अन्तर में, तेरे लिए रख कर उसका भेद, उसकी कुंजी गुरुमुखों के हवाले कर दी है । तू मन-बुद्धि द्वारा, ग्रन्थ-पोथियां, वेद-शास्त्र पढ़कर, सत्संग सुनकर कितना भी इस वस्तु को ढूँढने की कोशिश क्यों न करे, कभी सफल नहीं हो सकेगा : 'बिनु सतिगुर सरणाई' जब तक तू गूरुमुखों के बताये हुए उपदेश पर नहीं चलता । इसलिए स्वामीजी बार-बार हमें इसी नुक्ते या विषय पर लाते हैं कि जो कुछ भी मिलना है, शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है । जब भी नाम की कमाई कर सकेंगे, केवल गुरुमुखों के ज़रिये और मालिक के भक्तों के ज़रिये ही कर सकेंगे ।

सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी । धुन शब्द सुनो यह करनी ।।

स्वामीजी महाराज की शिक्षा हमें शरीर से बाहर नहीं जाने देती, हमारे मन को किसी कर्मकांड की ओर नहीं जाने देती । आप फ़रमाते हैं : 'सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी', कि केवल एक ही करनी करने की आवश्यकता है कि सुरत को नौ द्वारों से निकालकर आंखों के पीछे लाकर शब्द के साथ जोड़ो । यह नहीं कि गंगा गये तो गंगाराम बन गये, यमुना गये तो यमुनादास बन गये और जो भी किसी ने बताया वही कर्म करना शुरू कर दिया । यहां भी माथा टेक लिया, वहां भी माथा टेक लिया कि शायद सब-कुछ इन चीज़ों से ही मिल जायेगा । आप फ़रमाते हैं कि इस बात को अच्छी तरह मन में बिठा लो कि जो कुछ भी मिलना है, सुरत-शब्द के अभ्यास से मिलना है, नाम की

कमाई से मिलना है।

'हाथी के पाँव में सबका पाँव।' जप-तप, पूजा-पाठ, पुण्य-दान का जो भी फल है, वह सब शब्द और नाम की कमाई में ही आ जाता है। आप देखें, अगर हमारी ज़बान पर दिन-रात उस मालिक का नाम चढ़ा हुआ है, इससे बड़ा और कौन-सा जप हो सकता है? जब उस मालिक के हुक्म, मालिक के भाने में रहते हैं, इससे बड़ा तप और कौन-सा हो सकता है? जब प्यार में आकर महात्मा के स्वरूप को चौबीस घण्टे साथ-साथ लिये फिरते हैं, इससे बड़ी पूजा और क्या हो सकती है? जब ख़याल को आंखों के पीछे टिका कर अन्तर में अनहद वाणी को सुनते हैं, उससे बड़ा पाठ क्या हो सकता है? जब नाम रूपी अमृत को पीकर मन ही संसार से उदास और उचाट हो जाता है, इससे बड़ा वैराग्य क्या हो सकता है? न घर-बार छोड़ने की आवश्यकता है, न बेटे-बेटियां त्यागने की आवश्यकता है। दुनिया में रहना है, सूरमा बनकर रहना है, बहादुर बनकर रहना है और दुनिया में रहते हुए भी दुनिया की गन्दगी में नहीं लिबड़ना है तथा अपनी सुरत को आंखों के पीछे लाकर नाम से जोड़ना है।

गुरु नानक साहिब कहते हैं: 'पूजा करै सभु लोकु संतहु मनमुखि थाइ न पाई ॥' (आदि ग्रन्थ, ९१०) कि भक्ति तो दुनिया के सब जीव अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार करते हैं, क्योंकि आत्मा का आकर्षण अपने असल की ओर अवश्य खिचाव करता है और उसके अधीन होकर सब उस परमात्मा को ढूँढना शुरू कर देते हैं, परन्तु जो शब्द की कमाई करके, नाम की कमाई करके अपने मन को पवित्र कर लेते हैं, परमात्मा की वास्तविक भक्ति की जांच या परख उन गुरुमुखों को ही है। यही भक्ति वापस ले जाकर हमें हमारे ठिकाने पर पहुँचायेगी। स्वामीजी कहते हैं कि जो भक्ति उस परमात्मा को मंज़ूर है, वह सुरत को आंखों के पीछे लाकर नाम या शब्द की कमाई करने की भक्ति है।

मन चंचल थिर न रहावे। चित निर्मल कस होय आवे ॥
सुर्त शब्द कमाई करना। सब जतन दूर अब धरना ॥

आप फ़रमाते हैं कि अगर तालाब में पानी गन्दा हो, उसके
लहरें उठ रही हों, हम उसमें अपनी शक्ल नहीं देख सकते। यदि
स्थिर हो जायें, मिट्टी बैठ जाये तो हम उसमें अपनी शक्ल देख
हैं। हमारे मन के अन्दर विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों, जा
धर्मों और देशों के मोह की लहरें दिन-रात उठ रही हैं। हमारा
संसार के मोह और प्यार में फंस कर अति गंदा और मैला हो चुका
जब तक हम अपने आपको पहचानने के योग्य नहीं बनते, हम परम
को पहचानने के योग्य किस प्रकार बन सकते हैं? इस कार्य में सफ
प्राप्त करने के लिये यही उपाय है : 'सुर्त शब्द कमाई करना',
सुरत को शब्द के साथ जोड़ो, नाम के साथ जोड़ो। फिर समझाते
'सब जतन दूर अब धरना ॥' सिवाय सुरत-शब्द के अभ्यास के
की कमाई के, और कोई प्रयत्न करने की ज़रूरत नहीं है। बाकी
साधन, सब उपाय छोड़ देने हैं, सब कर्मकांड छोड़ देने हैं। केवल स
शब्द की कमाई करनी है, नाम की कमाई करनी है। आप फ़रमाते
कि मन की रुकावट को दूर करने का केवल एक ही उपाय है कि अ
खयाल को अन्तर में शब्द से जोड़ो, अन्तर में नाम से जोड़ो।

निश्चय दृढ़ इस पर धरना। आलस कर कभी न फिरना ॥

अब स्वामीजी महाराज दो ज़बरदस्त नसीहतें देते हैं। एक
महात्माओं पर और गुरुमुखों पर भरोसा करना है, विश्वास करना
कि शब्द और नाम की कमाई ही एक ऐसी भक्ति है जो हमें वापस
जाकर परमात्मा से मिला सकेगी, यही भक्ति हमारे मार्ग से मन
रुकावट को दूर कर सकेगी, आत्मा और मन की गांठ खोल सकेगी
इसी के द्वारा हमारी आत्मा पवित्र हो सकेगी, परमात्मा से मिलने
योग्य हो सकेगी। अगर हमे भरोसा न हो, विश्वास न हो, हमारा
कभी भी नाम की कमाई की ओर चल ही नहीं सकता। अगर हमें प
हो कि यह सड़क सीधी दिल्ली की ओर जाती है, किस प्रकार अप
मोटर दौड़ाते चले जाते हैं। अगर मन में शंका या भ्रम हो, जगह-जग
खड़े होकर पूछते हैं, नक्शे देखते हैं। थोड़ा चलते हैं, पर कभी दा

ड़ जाते हैं, कभी बायें चल पड़ते हैं । हमारी यात्रा कितनी लम्बी जाती है। यदि भरोसा न हो, यह संसार प्रगति ही नहीं कर कता । हमें विश्वास होता है तब हम हवाई-जहाज़ों में सैर करते हैं, मुद्री जहाजों में घूमते हैं । गाड़ियों में रात को निश्चिन्त होकर सो ाते हैं, वे कितने गड्ढों पर से गुज़रती हैं, कितनी नदियों पर से जाती , उन पर भरोसा करके ही यात्रा तय की जा सकती है। स्वामीजी हाराज कहते हैं कि महात्मा अपना जो निजी अनुभव समझाते हैं कि ुरत-शब्द के अभ्यास द्वारा ही मन की रुकावट मार्ग से दूर होगी, हमें उनके उपदेश, उनकी शिक्षा पर भरोसा करना पड़ेगा, विश्वास करना ड़ेगा, ताकि हम उनके अनुभव से पूरा-पूरा लाभ उठा सकें ।

दूसरी सीख यह देते हैं कि हमें आलस नहीं करना चाहिए, सुस्ती नहीं करनी चाहिए। रोज़ मालिक की भक्ति को पूरा-पूरा समय देना चाहिये । मालिक की भक्ति का कोई ख़ास समय नहीं है । सुबह बैठें, दोपहर को बैठें, शाम को बैठें, जो भी समय हम मालिक की भक्ति, नाम की कमाई के लिये निकालेंगे, वही समय हमारे लेखे में लिखा जाता है । परन्तु सुबह के समय के बहुत से ऐसे लाभ हैं, जो हमें दूसरे किसी समय में मिल ही नहीं सकते । जिस समय हम सुबह सोकर उठते हैं, सबसे पहले हमारा शरीर बिलकुल ताज़ा होता है, पिछले दिन की हमारी सारी थकावट दूर हो चुकी होती है, हमारा ख़याल भी संसार के अन्दर फैला हुआ नहीं होता, गलियों, और मुहल्लों में भी शान्ति होती है । फिर जब हम एक नया दिन शुरू कर रहे हैं तो क्यों न मालिक का नाम लेकर शुरू किया जाये, ताकि उसका सुरूर, उसकी खुशी सारा दिन हमारे साथ रहे । अगर हम दोपहर के समय भजन में बैंठेंगे, स्त्रियों को चौके-चूल्हे का काम भी करना है, पुरुषों को दफ्तर भी जाना है तथा गलियों-मुहल्लों में भी कितना शोर होता है । वह समय भी नहीं निकलता । यदि हम शाम को भजन करते हैं, सारा दिन काम कर-कर के शरीर थक जाता है और सारे दिन के झगड़े आँखों के आगे आकर फिरना शुरू हो जाते हैं । जो सुबह घण्टा, डेढ़

घण्टे में काम बनता है, उसके लिये शाम को चार-पाँच घण्टे चाहिये इतना समय किसके पास होता है। इसलिये महात्मा सुबह के सम को ही भजन के लिए उपयुक्त बताते हैं।

इसका यह मतलब नहीं कि जिसके पास सुबह समय न हो, व दोपहर को न बैठे या शाम को भजन के लिए न बैठे। जो घड़ी, घड़ी, घण्टा, दो घण्टा मालिक की भक्ति करेंगे, नाम की कम करेंगे, वही हमारे लेखे में लिखी जायेगी। उसी का हमें लाभ मिलेगा इसलिए स्वामीजी कहते हैं कि आलस न करें, सुस्ती न करें। यों कागज़-पेंसिल लेकर योजनायें न बनाते रहो कि थोड़े वर्ष रह गये रिटायर हो जायेंगे, बाल-बच्चे कारोबार सँभाल लेंगे, तब निश्चि होकर किसी मन्दिर, मस्जिद या गुरुद्वारे में बैठ कर मालिक की भवि करेंगे। कितनी भी नेक-नीयत से, अच्छी भावना से योजनाएँ क्यों बनायें, हमें मालिक की योजनाओं का पता नहीं चलता। कुछ पत नहीं कि कब भरे परिवार को छोड़कर जाना पड़ जायेगा। किस सम मालिक का बुलावा आ जायेगा। आप रोज़ अखबारों में पढ़ते हैं ि ग्रास हाथ में ही रह जाता है, मुख तक नहीं पहुँचता कि हृदय-गति रु जाती है। हम योजनाएँ तो ऐसे बनाते हैं, जैसे हमें हज़ारों वर्ष रहन है।

स्वामीजी महाराज समझाते हैं कि रोज़ मालिक की भक्ति करन चाहिये। मन के साथ ज़बरदस्ती भी करनी पड़े तो ज़रूर करन चाहिए, क्योंकि यही चीज़ अन्त समय हमारे साथ जायेगी। बाकी संसा की सब चीज़ें यहीं छोड़ देनी पड़ेंगी। यदि महमूद गज़नवी के सा हिन्दुस्तान की धन-दौलत न जा सकी, हमारे साथ दुनिया की कौन सी धन-दौलत जा सकेगी ? यह जो रुपया-पैसा, सम्पत्ति आदि आ हमारे नाम है, ये वस्तुएँ कभी हमारे बुजुर्गों के नाम भी थी। अग उनके साथ नहीं गईं, हमारे साथ किस प्रकार जा सकेंगी ? अगर चीज़ें किसी के साथ जा सकती होतीं तो लोग पहले बुक करव कर भेज देते। हमारे हिस्से कुछ भी न आता। स्वामीजी प्यार के सा